

द्वादश अंक



सत्यमेव जयते

त्रैमासिक
जनवरी-मार्च 2000

चेतना



महालेखाकार (लेखा एवं हकदारी)- II, बिहार, पटना
महालेखाकार भवन

चेतना परिवार



बैठे हुए हैं बायें से संरक्षक एवं परामर्शी :
श्री ललन प्रसाद श्रीवास्तव, प्र. सम्पादक, श्री अरुण कुमार सिंह, संरक्षक, श्री खालिद बिन जमाल, परामर्शी
खड़े हैं दायें से परामर्शी श्री राजेन्द्र प्रसाद मिश्र एवं साथ में हैं श्री लालचन्द शर्मा (हिन्दी कक्ष)

मुख्य आवरण-पृष्ठ परिचय
वर्ष 1998-99 में महालेखाकार (ले० एवं हक)-॥, बिहार, पटना के कार्यालय को पूर्वी क्षेत्र के
अन्तर्गत 'क' क्षेत्र में राजभाषा हिन्दी में उत्कृष्ट कार्य करने हेतु प्रथम स्थान प्राप्त करने के
फलस्वरूप माननीय मुख्यमंत्री, आसाम के कर-कमलों से नवाजा गया पुरस्कार स्वरूप शील्ड ।



चेतना

त्रैमासिक हिन्दी पत्रिका
(द्वादश अंक)

महालेखाकार (लेखा एवं हकदारी)-II, बिहार, पटना का कार्यालय
महालेखाकार भवन
वीरचन्द पटेल पथ, पटना-800 001

स्वत्वाधिकार : महालेखाकार (ले.एवं.ह.)-II, बिहार, पटना
प्रकाशन : कार्यालयीय पत्रिका 'चेतना'
प्रकाशक : महालेखाकार (ले.एवं.ह.)-II, बिहार, पटना का कार्यालय
वीरचंद पटेल पथ, पटना-800 001
अंक : द्वादश अंक
जनवरी-मार्च, 2000
मूल्य : राजभाषा हिन्दी की अनवरत सेवा
मुद्रक : कोरल कम्प्यूटर प्रिन्ट
42, फ्रेजर रोड, पटना-800 001
दूरभाष : 231708

हिन्दी को आप हिन्दी कहें या हिन्दुस्तानी, मेरे लिए तो दोनों एक ही हैं । हमारा कर्तव्य यह है कि हम अपना राष्ट्रीय कार्य हिन्दी भाषा में ही करें । मुझे पक्का विश्वास है कि किसी दिन हमारे द्रविड़ भाई-बहन गम्भीर भाव से हिन्दी का अध्ययन करने लगेंगे । आज अंग्रेजी भाषा पर अधिकार प्राप्त करने के लिए वे जितनी मेहनत करते हैं, उसका आठवां हिस्सा भी हिन्दी सीखने में करें तो बाकी हिन्दुस्तान जो आज उनके लिए बन्द किताब की तरह है, उससे वे परिचित होंगे और हमारे साथ उनका ऐसा तादात्म्य स्थापित हो जायेगा जैसा पहले कभी नहीं था ।
— महात्मा गाँधी

चेतना परिवार

संरक्षक :

श्री अरूण कुमार सिंह
महालेखाकार (लेखा एवं हकदारी)-II बिहार, पटना

प्रकाशन परामर्शदातृ समिति :

श्री सतीश चन्द्र राउत
वरिष्ठ उपमहालेखाकार, बिहार, पटना

श्री खालिद बिन जमाल
उपमहालेखाकार, बिहार, पटना

श्री राजेन्द्र प्रसाद मिश्र
वरिष्ठ लेखा अधिकारी, बिहार, पटना

सम्पादक मण्डल :

प्रधान सम्पादक :

श्री ललन प्रसाद श्रीवास्तव
वरिष्ठ लेखा अधिकारी, हिन्दी कक्ष

सम्पादक :

श्री नरेन्द्र कुमार सिंह 'नाहर'
वरिष्ठ लेखाकार, हिन्दी कक्ष

अनुक्रमणिका

क्र.सं.	विषय	रचनाएँ	रचयिता	पृष्ठ सं.
1.	चेतना परिवार			3
2.	अनुक्रमणिका			4
3.	महालेखाकार का संदेश			5
4.	वरिष्ठ उपमहालेखाकार का संदेश			6
5.	उपमहालेखाकार का संदेश			7
6.	सम्पादकीय			8
7.	आपके पत्र	निबन्ध	श्री अरूण कुमार सिंह	9-11
8.	मित्रता	समीक्षा	डॉ. खगेन्द्र ठाकुर	12-13
9.	उपभोक्तावादी संस्कृति	लेख	श्री ललन प्रसाद श्रीवास्तव	14-19
10.	ज्योतिष और विज्ञान	कविता	श्री नरेन्द्र कुमार सिंह 'नाहर'	20-24
11.	शत-शत नमन	हास्य-व्यंग्य	श्री मनोज कुमार 'हँसमुख'	25
12.	हँस भाई हँस	लेख	श्री सूर्य मोहन प्रसाद	26
13.	प्रशासन-एक मजबूत कड़ी	कविता	श्री पीयूष ओझा	27-29
14.	इंसानों का अभ्यारण	यात्रा-वृत्तांत	श्री अनिरुद्ध राय	30
15.	ओरछा की सैर	कविता	श्री रमा प्रसाद चक्रवर्ती	31-32
16.	नई शताब्दी	निबन्ध	श्री मनमीत कुमार	33
17.	खेल	कविता	श्री राम प्रताप सिंह 'मधुप'	34-35
18.	अंतहीन दौड़	लेख	श्री ओम प्रकाश	36
19.	योगम् शरणं गच्छामि	लेख	श्री चन्दन कुमार	37-39
20.	मानसिक रूप से ईमानदार बनें	कविता	श्री बंशीधर मिश्र	40-41
21.	हर मुश्किल आसान	कविता	श्री चन्द्रिका सिंह	42
22.	चिन्ता यही है	कविता	सुजीत कुमार	42
23.	प्यारे वतन	निबन्ध	श्री राम सुभग राम	43-44
24.	प्रजातंत्र का कमाल	लेख	सौरभ निरूपम	45-48
25.	संयुक्त राष्ट्र संघ का मानवाधिकार एवं विश्व शांति के क्षेत्र में योगदान	कविता	श्री अरूण कुमार पाठक	49
26.	जिन्दगी	संस्मरण	श्री हरeram प्रधान	50-51
27.	झूठी शान	कविता	श्री राजबल्लभ प्रधान	52
28.	माँ की पुकार			

पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचारों से महालेखाकार कार्यालय का सहमत होना आवश्यक नहीं है। ये रचनाकारों के निजी विचार हैं। साथ ही रचना की मौलिकता के लिए लेखक स्वयं जिम्मेवार हैं।
— प्रधान सम्पादक



सत्यमेव जयते

महालेखाकार (ले. एवं ह.)-II
बिहार, पटना का कार्यालय
वीरचन्द पटेल पथ, पटना-800 001

महालेखाकार (ले. एवं ह.)-II, बिहार, पटना का



संदेश

मुझे यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता हो रही है कि भारतीय संविधान सम्मत राजभाषा हिन्दी के समुचित प्रयोग के प्रचार-प्रसार हेतु हमारे कार्यालय की ओर से हिन्दी पत्रिका 'चेतना' अपने द्वादश अंक से त्रैमासिक रूप में प्रकाशित होने जा रही है।

अत्यन्त गौरव की बात है कि इस कार्यालय को पूर्वी क्षेत्र के अन्तर्गत राजभाषा के 'क' क्षेत्र में हिन्दी में सर्वोत्तम कार्य करने के लिए वर्ष 1998-99 में प्रथम स्थान पाने का सौभाग्य मिला है। फलतः पुरस्कार स्वरूप इसे 'शील्ड' एवं 'प्रशस्ति पत्र' प्रदान किये गये हैं। एतदर्थ मैं कार्यालय के समस्त अधिकारियों एवं कर्मचारियों को हार्दिक बधाई देता हूँ और आशा करता हूँ कि भविष्य में भी वे इसी तरह हिन्दी के उन्नयन हेतु निष्ठापूर्वक निरन्तर कार्य करते रहेंगे और हिन्दी की निःस्वार्थ सेवा करते रहेंगे ताकि हम गर्व से कह सकें कि हिन्दी हमारी हर श्वास में बसी है।

पत्रिका को ज्ञानवर्द्धक, भावप्रद एवं रूचिकर बनाने में समस्त रचनाकारों ने सराहनीय प्रयास किया है। सम्पादक मंडल ने भी इसे सजाने-सँवारने में अथक प्रयत्न किया है। अतः सभी रचनाकारों एवं सम्पादक-मंडल को हिन्दी के प्रति उनकी अटूट निष्ठा एवं अगाध प्रेम के लिए कोटिशः धन्यवाद देता हूँ। अन्त में 'चेतना' की सम्यक् प्रगति एवं उज्ज्वल भविष्य हेतु मेरी हार्दिक शुभकामनाएँ।

अरूण कुमार सिंह

महालेखाकार (ले० एवं ह०)-II

बिहार, पटना



सत्यमेव जयते

महालेखाकार (ले. एवं. ह.)-II
बिहार, पटना का कार्यालय
वीरचन्द पटेल पथ, पटना-800 001

वरिष्ठ उपमहालेखाकार, बिहार, पटना का



संदेश

अत्यन्त हर्ष की बात है कि संघ सरकार की राजभाषा नीति के अनुपालन में हिन्दी को बढ़ावा देने के उद्देश्य से हिन्दी पत्रिका 'चेतना' त्रैमासिक रूप में प्रकाशित की जा रही है ।

आशा है कि यह पत्रिका कार्यालय के अधिकारियों व कर्मचारियों को हिन्दी में अच्छा-से-अच्छा लेखन के लिए प्रोत्साहित करेगी जो हिन्दी की प्रगति में सहायक साबित होगा । पत्रिका के सभी रचनाकारों एवं सम्पादक-मंडल को उनके सार्थक प्रयास के लिए हार्दिक धन्यवाद देता हूँ तथा पत्रिका की उत्तरोत्तर प्रगति की शुभकामना करता हूँ ।

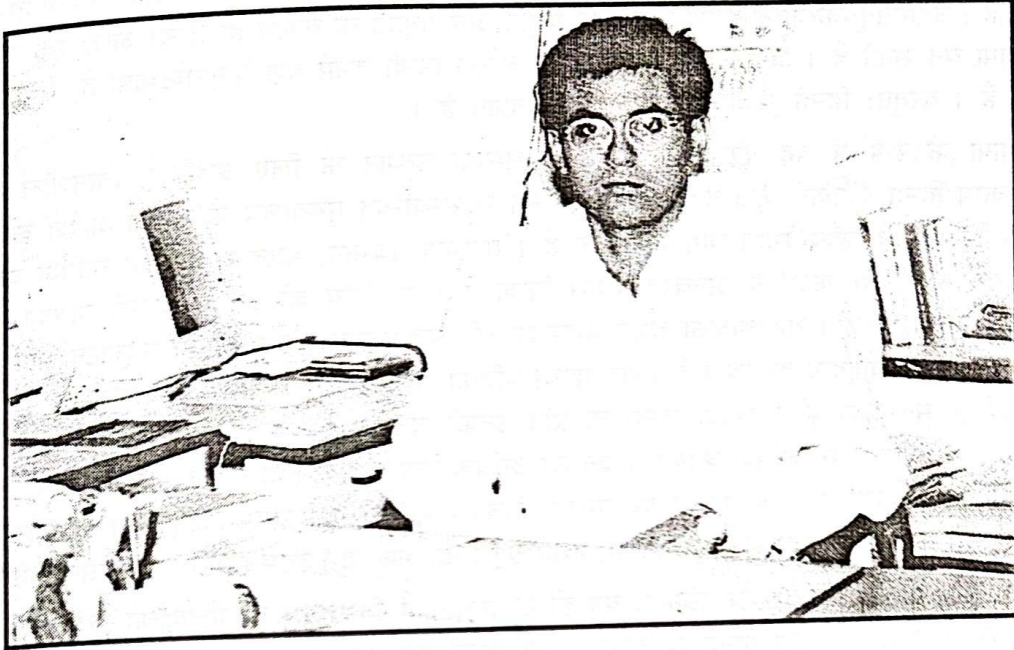
एस० सी० राउत
वरिष्ठ उप महालेखाकार
(जी०ई० एवं निधि)
बिहार, पटना



सत्यमेव जयते

महालेखाकार (ले. एवं. ह.)-II
बिहार, पटना का कार्यालय
वीरचन्द पटेल पथ, पटना-800 001

उपमहालेखाकार, बिहार, पटना का



संदेश

मुझे यह जानकर बेहद खुशी है कि इस कार्यालय की हिन्दी पत्रिका 'चेतना' अब अपने बारहवें अंक से त्रैमासिक होने जा रही है ।

उम्मीद है कि पत्रिका का यह अंक अन्य अंकों की तरह उद्देश्यपूर्ण होगा और अपनी कीर्ति को पाठकों की चेतना में बनाये रखेगा। पत्रिका के सफल प्रकाशन के लिए मेरी ओर से सभी लेखकों एवं सम्पादक मंडल को हार्दिक बधाई ।

पत्रिका की अविरल उन्नति की मंगल कामना ।

के० बी० जमाल
उप महालेखाकार
(प्रशा. एवं पेंशन)
बिहार, पटना

संपादकीय

राजभाषा स्वर्ण जयन्ती वर्ष के शुभ अवसर पर कार्यालयीय हिन्दी पत्रिका 'चेतना' को द्वादश अंक से त्रैमासिक रूप में अपने सहृदय एवं सुधी पाठकों के कर कमलों में सौंपे हुए मुझे अपार आनन्द की अनुभूति हो रही है।

हिन्दी एक प्रबलमान, सहज-सरल और सशक्त भाषा है। वह अपनी आन्तरिक शक्ति को विकसित करने के लिए बाह्य प्रभावों एवं परिस्थितियों से शक्ति संचय करती हुई निरन्तर विकासशील रही है। हिन्दी भाषा का शब्द-भंडार विपुल एवं विशाल है। वह बाहर के उपयुक्त शब्दों को ग्रहण करने में संकोच नहीं करती है। हिन्दी विदेशी शब्दों को उदारतापूर्वक अपनाकर अपने शब्द-भंडार की भी श्री-वृद्धि की है तथा अपने संरचनात्मक रूप को अधुण्ण रखा है। उदारतापूर्वक शब्द-ग्रहण करने की प्रवृत्ति और प्रकृति के कारण ही हिन्दी आज एक गतिशील एवं प्रगतिशील भाषा बन सकी है। अपनी इसी विशेषता के कारण हिन्दी हमारे देश की राष्ट्रभाषा है, राजभाषा है, जन सम्पर्क भाषा है। वस्तुतः हिन्दी संजीवनी शक्ति से ओतप्रोत है।

राजभाषा के रूप में यह कार्यालय हिन्दी के सम्यक् उत्थान के लिए अहर्निश प्रयत्नशील है। (यहाँ शत-प्रतिशत काम हिन्दी में किये जाते हैं) इस हेतु हिन्दी से सम्बन्धित मुख्यालय के समस्त आदेशों को परिचालित कराने में 'हिन्दी कक्ष' ने सदैव सहर्ष योगदान किया है। राजभाषा विभाग, भारत सरकार के वार्षिक कार्यक्रमों को कार्यान्वित कराने में 'हिन्दी कक्ष' ने अनवरत प्रयास किया है। कार्यालय की ओर से हिन्दी पत्रिका 'चेतना' का अबाध प्रकाशन होता रहा है। यह पत्रिका हमारे कार्यालय की सृजनात्मक प्रतिभाओं का उद्घाटन मात्र नहीं अपितु इस कार्यालय का जीवंत बौद्धिक दस्तावेज है। यह हिन्दी पत्रिका 'चेतना' वर्ष 1986 से ही कार्यालय के अधिकारियों एवं कर्मचारियों के मन-प्राण में राजभाषा हिन्दी के प्रति उनकी चेतना को उद्बुद्ध करती रही है। राजभाषा स्वर्ण जयन्ती वर्ष के शुभ अवसर पर वार्षिक कार्यक्रम बनाकर अधिकारियों एवं कर्मचारियों के बीच विभिन्न प्रतियोगिताओं का आयोजन किया जा रहा है ताकि हिन्दी के सम्यक् विकास में सबों की सहर्ष सहभागिता हो और गर्व से हम कह सकें कि हिन्दी हमारी राष्ट्रभाषा है, राजभाषा है, हमारे प्राणों की भाषा है जिसमें हमारी प्रत्येक सांस की धिरकन है।

हमारी अटूट हिन्दी निष्ठा और संकल्प का ही सुपरिणाम है कि हमारे कार्यालय को पूर्वी क्षेत्र के अन्तर्गत राजभाषा के 'क' क्षेत्र में राजभाषा हिन्दी में उत्कृष्ट कार्य करने हेतु वर्ष 1998-99 में प्रथम स्थान प्राप्त करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है जिसके फलस्वरूप माननीय मुख्यमंत्री, आसाम के कर-कमलो से शील्ड एवं प्रशस्ति पत्र प्राप्त करने का गौरव मिला है। आज हमारा समस्त कार्यालय गौरवान्वित है। इसके लिए हमारे कार्यालय के सभी अधिकारी और कर्मचारी प्रशंसा के पात्र हैं। मैं उनके प्रति अपार कृतज्ञता समर्पित करता हूँ।

पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं को हमारे पाठकों ने पत्र भेजकर मुक्तकंठ सराहा है और कतिपय सुझाव भी दिये हैं जिनके लिए मैं तहेदिल से उनका शुक्रगुजार हूँ और वे सभी बधाई के पात्र हैं। सम्पादक मंडल आपके सहयोग का आभारी हैं और पूर्ण विश्वास करता है कि पत्रिका के पाठक, रचनाकार और सहयोगी मित्र सदैव अपनी सारगर्भित, रुचिकर, ज्ञानवर्द्धक एवं राजभाषा हिन्दी के सम्यक् विकास में सहायक सामग्री दो प्रतियों में, कागज के एक ही पृष्ठ में सुन्दर, सुस्पष्ट लिखावट में या टंकित कराकर समुचित समय पर प्रेषित कर पत्रिका की अधुण्णता को बनाये रखने में पूरा सहयोग प्रदान करेंगे। यहाँ मैं रचनाकारों से विनम्रतापूर्वक निवेदन करना चाहूँगा कि पत्रिका विभागीय है इसलिए इसको विभाग के लिए तथा हिन्दी के सम्यक् प्रचार-प्रसार के लिए और अधिक उपयोगी बनाने हेतु इसमें विभागीय विषयों पर सामग्री/रचना की बहुलता हो। साथ ही रचनाकारों से यह आग्रह भी है कि स्थानाभाव के कारण प्राप्त समस्त रचनाओं को तुरंत प्रकाशित करने में व्यावहारिक कठिनाई है अतः रचनाकार बन्धु यह न समझें कि उनकी रचना व्यर्थ गई। पत्रिका के लिए मानक उनकी रचनाओं को अवश्य प्रकाशित किया जायेगा।

अंत में पत्रिका परिवार की ओर से समस्त रचनाकारों, पाठकों, मार्गदर्शकों और सहयोगियों को राजभाषा स्वर्ण जयन्ती वर्ष के पुनीत अवसर पर हिन्दी की समृद्धि एवं चतुर्दिक प्रगति के संकल्प हेतु हार्दिक शुभकामनाएँ !

प्रधान सम्पादक



आपके कार्यालय की हिन्दी पत्रिका 'चेतना' का एकादश अंक प्राप्त हुआ। लेख 'विदेश यात्रा के अनुभव', 'मंदिर की शादी' एवं कविता 'आज का बेचारा आदमी' बहुत ही रोचक लगी। पत्रिका के उज्ज्वल भविष्य के लिए हार्दिक कामना।

हिमाचल प्रदेश, शिमला

लेखा परीक्षा अधिकारी,
(हिन्दी कक्ष), महालेखाकार (ले० प०)
हिमाचल प्रदेश शिमला का कार्यालय

राजभाषा के प्रचार-प्रसार के लिए आपके कार्यालय द्वारा प्रकाशित हिन्दी पत्रिका 'चेतना' के एकादश अंक को प्राप्त कर हृदय गदगद एवं तन प्रफुल्लित हो उठा।

पत्रिका का उद्देश्य कार्यालयीय सदस्यों की प्रच्छन्न काव्य सृजन प्रतिभा को उद्दीप्त करना है जिसमें 'चेतना' ने कार्यालयीय सदस्यों में वस्तुतः चेतना का संचार किया है जिसकी साक्षी इसमें निहित सामग्री है। विभिन्न विधाओं में रचित रचनाएँ कार्यालय के सदस्यों की राजभाषा के प्रति निष्ठा को प्रतिबिम्बित करती दृष्टिगत होती हैं। सभी रचनाएँ श्रेष्ठ एवं विषयानुकूल हैं। प्रत्येक रचना में रचनाकार की राजभाषा के प्रति समर्पित भावना लक्षित है। भाषा सर्वबोधगम्य एवं शैली प्रवाहमयी है।

अंत में सम्पादक मंडल एवं सभी रचनाकारों को धन्यवाद देता हुआ पत्रिका की अविरल प्रगति की मंगल कामना !

नई दिल्ली,
25.10.99

वरिष्ठ लेखापरीक्षा अधिकारी, (राजभाषा)
कार्यालय महानिदेशक लेखापरीक्षा
केन्द्रीय राजस्व, इन्द्रप्रस्थ इस्टेट, नई दिल्ली

आपके कार्यालय द्वारा प्रकाशित अर्द्धवार्षिक हिन्दी पत्रिका 'चेतना' के एकादश अंक की एक प्रति प्राप्त हुई। इसके लिए बहुत धन्यवाद।

पत्रिका की सभी रचनाएँ उच्च कोटि की हैं। इसलिए सभी रचनाकार और सम्पादक मंडल बधाई के पात्र हैं।

आशा है कि पत्रिका हिन्दी भाषा के उत्थान में सहायक बनी रहेगी। पत्रिका के उज्ज्वल भविष्य के लिए हार्दिक शुभकामनाएँ।

तमिलनाडु एवं पांडिचेरी,
11.11.99

वरिष्ठ लेखा परीक्षा अधिकारी, (प्र०)
कार्यालय महालेखाकार (ले०प०)-I
तमिलनाडु एवं पांडिचेरी

आपके कार्यालय की हिन्दी पत्रिका 'चेतना' के एकादश अंक की प्रति प्राप्त हुई। धन्यवाद। पत्रिका अपने नाम के अनुरूप कार्यालय के अधिकारियों एवं कर्मचारियों में हिन्दी के प्रति चेतना जगती प्रतीत होती है। वैसे तो पत्रिका में सम्मिलित सभी रचनाएँ श्रेष्ठ एवं उच्च कोटि की हैं परन्तु श्री शशि भूषण प्रसाद की कविता "बाबुल की गलियाँ" बहुत ही मार्मिक हैं।

पत्रिका की उज्ज्वल प्रगति के लिए लेखापरीक्षा, पंजाब की ओर से विपुल शुभकामनाएँ।

पंजाब

21.10.99

वरिष्ठ लेखा परीक्षा अधिकारी,
(हिन्दी / प्रशि० कक्ष)

महालेखाकार (ले०प०), पंजाब का कार्यालय

महालेखाकार (लेखा एवं हकदारी)-II, बिहार, पटना के कार्यालय की अर्द्धवार्षिक हिन्दी पत्रिका 'चेतना' का एकादश अंक मिला। इसके लिए बहुत-बहुत धन्यवाद।

पत्रिका का विषय-चयन देखने से लगता है कि महालेखाकार (ले० एवं ह०) के कार्यालय में पदस्थापित अधिकारियों और कर्मचारियों में साहित्यिक और लेखकीय चेतना विकसित करने के उद्देश्य से यह प्रकाशन हो रहा है। यह महत्त्वपूर्ण और सार्थक है। इससे हिन्दी के प्रति नई उम्र के अधिकांश लोगों की उदासीनता कुछ हद तक दूर हो सकती है।

डा० जितेन्द्र कुमार की संक्षिप्त सम्पादकीय टिप्पणी पर मेरा ध्यान पहले गया है। उन्होंने मैथिली शरण गुप्त की कविता की पंक्तियों को उद्धृत करते हुए ठीक ही लिखा है कि किसी राष्ट्र की कल्पना तब तक नहीं की जा सकती जिसकी अपनी एक राष्ट्रभाषा नहीं हो। श्री अरूण कुमार सिंह, महालेखाकार की विदेश-यात्राओं की विवरणी उन देशों की संस्कृति का पता देती है।

'चेतना' के इस अंक में प्रकाशित कविताओं के चयन में भविष्य में ध्यान देने की जरूरत है। हालांकि कुछ रचनाओं के कथ्य सामाजिक यातनाओं को स्पर्श करते हैं, लेकिन शिल्प के निर्वाह में कमजोरी है। कहानियाँ भी हैं, लेकिन उनमें कहानीपन का अभाव है। ये सब बातें ऐसी विभागीय पत्रिकाओं में रहेंगी ही। लेकिन, सागर में गहरे गोते लगाने से कुछ मोती भी मिल सकते हैं। कुल मिलाकर यह अंक अच्छा है। इसके प्रकाशन और सम्पादन में लगे महानुभावों को साधुवाद!

गर्दनीबाग, पटना

26.10.1999

गोपीवल्लभ सहाय,
साहित्यकार

कार्यालयीय हिन्दी पत्रिका 'चेतना' प्राप्त हुई। पत्रिका में प्रकाशित सभी रचनाएँ पठनीय हैं एवं संग्रहणीय हैं। पत्रिका राजभाषा प्रचार-प्रसार की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। सभी रचनाकारों एवं सम्पादक

मंडल को श्रेष्ठ प्रकाशन के लिए बधाई । आशा है कि आगामी अंक और भी रोचक होंगे ।
पत्रिका का उज्ज्वल भविष्य की कामना सहित ।

उत्तर प्रदेश,
18.10.99

सहायक लेखा परीक्षा अधिकारी, (हिन्दी)
कार्यालय महालेखाकार (ले०प०)-I, उत्तर प्रदेश

आपके कार्यालय द्वारा प्रकाशित अर्द्धवार्षिक हिन्दी पत्रिका 'चेतना' के एकादश अंक की एक प्रति प्राप्त हुई । एतदर्थ धन्यवाद ।

पत्रिका में संकलित रचनाएँ राजभाषा हिन्दी के प्रचार-प्रसार में काफी सहायक हैं ।

आशा की जाती है कि पत्रिका के पाठकगण इसमें संकलित रोचक, ज्ञानवर्द्धक एवं उत्कृष्ट सामग्रियों का लाभ उठा सकेंगे ।

कलकत्ता,
15.10.1999

वरिष्ठ लेखापरीक्षा अधिकारी,
हिन्दी कक्ष

आपकी कार्यालय हिन्दी पत्रिका 'चेतना' का एकादश अंक प्राप्त हुआ । एतदर्थ धन्यवाद ।
पत्रिका में प्रकाशित सभी रचनाएँ सुबोध और रोचक हैं । पत्रिका की उत्तरोत्तर प्रगति के लिए शुभ कामनाएँ ।

ग्वालियर,
12.10.99

सहायक लेखा अधिकारी, (राजभाषा)
महालेखाकार (ले० एवं प०)-I, मध्य प्रदेश,
ग्वालियर का कार्यालय ।

आपके कार्यालय की हिन्दी पत्रिका 'चेतना' का अर्द्धवार्षिक अंक प्राप्त हुआ । धन्यवाद ।
पत्रिका का आवरण अपनी भव्यता लिये हुए है । इसमें प्रकाशित सभी रचनाएँ रोचक, ज्ञानवर्द्धक एवं उत्कृष्ट हैं । विशेषतः श्री अरूण कुमार सिंह की कविता "आज का बेचारा आदमी", श्री राम सुभग राम का लेख "मंदिर की शादी", श्री राम प्रताप सिंह 'मधुप' की कविता "गुलामी की दस्तक" इत्यादि अच्छे लगे । श्री ओम प्रकाश ने अपने लेख "योग - एक अनुभूति" के द्वारा पाठकों तक स्वास्थ्य सम्बन्धी अच्छी जानकारी पहुँचाने का सफल प्रयास किया है ।

पत्रिका राजभाषा हिन्दी को प्रगति पथ की ओर अग्रसर करती प्रतीत होती है । मैं आशा करता हूँ कि पत्रिका का आगामी अंक और भी रोचक होगा । पत्रिका की उत्तरोत्तर प्रगति की कामना के साथ।

जयपुर,
12.10.99

प्रभाकर जोशी, हिन्दी अधिकारी,
महालेखाकार(ले०प०), राजस्थान का कार्यालय



मित्रता

श्री अरुण कुमार सिंह
महालेखाकार (ले० एवं ह०)-II
बिहार, पटना

मेरा कोई मित्र जब तबादले में अपने शहर से दूसरे शहर चला जाता है तो मुझे अफसोस होता है। ऐसी भावना स्वभाविक है और सभी को ऐसा ही महसूस होता होगा। एक मित्र का साथ छूटना पीड़ादायक होता है क्योंकि सुख या दुःख के मौके पर उसकी कमी खलती है। खुशी जहाँ आधी हो जाती है, दुःख बाँटने वाले के अभाव में दुगुना हो जाता है। एक अंतरंग दोस्त संकट की स्थिति में कारगर युक्तियाँ सुझाता है और विकट परिस्थिति से निकालने का रास्ता बताता है। यदि विपदा टालना संभव न हो तो कम-से-कम उसका दृढ़तापूर्वक सामना करने की प्रेरणा देता है। कष्ट झेलने वाले को इस बात की तसल्ली होती है कि वह अकेला नहीं है।

दो व्यक्तियों के बीच मित्रता होना वैसी ही असामान्य घटना है जैसा एक स्त्री और पुरुष में प्रेम होना। एक कक्षा में चालीस-पचास विद्यार्थी पढ़ते हैं, पर सबकी सबसे मित्रता नहीं होती। चार-पाँच बच्चों की कई मित्र-मंडलियाँ बन जाती हैं। ऐसा क्यों होता है? एक समान पारिवारिक परिस्थितियों वाले बच्चे सामान्यतः एक गुट के सदस्य होते हैं। उदाहरण के लिए, प्रशासन एवं पुलिस अधिकारियों के बच्चों या व्यापारियों, उद्योगपतियों के बच्चों का अपना-अपना गुट हो सकता है। पर कई बार अलग-अलग वर्गों के बच्चे भी एक मंडली में संगठित हो जाते हैं। इसका कारण एक समान मेधा या खेल-कूद या अन्य गैर-शैक्षिक गतिविधियों में रुचि का होना होता है। बच्चों में सामान्यतः वर्ग या जाति के अनुसार भेदभाव देखने को नहीं मिलता पर आजकल कई स्कूलों में वस्त्रादि या वाहनों के उपभोग के मामले में मिली छूट की वजह से वर्ग भेद साफ झलकने लगा है। इसके कारण बच्चों के बीच स्वाभाविक ढंग से मित्रता-विकास की प्रक्रिया को ठेस लगी है।

कई बार ऐसा भी देखा गया है कि वयस्क होने पर यदि दो मित्रों के बीच आर्थिक एवं सामाजिक स्थितियों में गहरी खाई हो तो पुरानी मित्रता चरमरा जाती है। बिरले ही कहीं ऐसी विषम परिस्थितियों में भी दो दोस्त पहले जैसा सम्बंध निभा पाते हैं। इस दरार का एक कारण दोनों परिवारों के अन्य सदस्यों के बीच सौहार्द की कमी है। आप अपने दोस्त से भले

पहले जैसा ही उठना-बैठना, बोलना-चालना बनाये रखना चाहें पर आप अपनी पत्नी या अपने बच्चों से भी अपने मित्र की पत्नी या बच्चों के प्रति वैसी ही घनिष्ठता बरतने की माँग नहीं कर सकते। यह तभी संभव है जब दोनों परिवारों के बीच आर्थिक और सामाजिक स्तर पर समानता हो या पारिवारिक संबंध हो।

समयाभाव या दूरी के कारण भी मित्रता का पौधा देख-रेख के बिना कुम्हला जाता है। इस पौधे को बराबर सिंचाई एवं खाद आदि की आवश्यकता होती है जिससे उसे प्यार और सम्मान रूपी पौष्टिक आहार मिलता रहे। यदि व्यस्तता के कारण दो मित्र लम्बे समय तक एक दूसरे से मिल नहीं पायें तो संभव है कि पहले वाली घनिष्ठता बनाये रखने में कठिनाई हो। पर यह भी इस बात पर निर्भर है कि मित्रता के पौधे की जड़ें कितनी गहरी गई हैं। यदि वह पिछले वर्षों की देखभाल से एक विशाल वृक्ष का रूप धारण कर लिया हो तो समयाभाव या दूरी का उस पर खास असर नहीं होता। आज के आधुनिक युग में टेलिफोन और इंटरनेट ने दूरियों को काफी हद तक पाट दिया है। अतः यदि आपका कोई सच्चा मित्र हो तो आप दूरी की परवाह न करें, सिर्फ टेलिफोन घुमायें या उसे "ई-मेल" करें।

आज महानगर में भाग-दौड़ की जिंदगी व्यतीत करने वाला व्यक्ति दफ्तर से घर आकर या तो टी० वी० के सामने बैठ अपना कोई मनपसंद धारावाहिक देखता है या इंटरनेट पर "सर्फिंग" करके किसी रोचक विषय की जानकारी हासिल करता है या किसी प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ या लेखक से "चैट" करता है। यदि उसे टी०वी० या इंटरनेट ऊबाऊ लगता है और परिवार में भी अन्य सदस्यों के साथ गप-शप आदि में मन नहीं लगता तो उसे एक और विकल्प है। वह टेलिफोन का उपभोग कर मित्रता कर सकता है—पुरुषों या महिलाओं से। समाचार पत्रों में आजकल "फ्रेंडशिप लाइन" या "पार्टी कनेक्शन" का काफी विज्ञापन आता है। आप चाहें तो उनमें दिये नम्बरों पर जी भर कर दिल की बातें कर सकते हैं अपने दूरभाषी मित्रों से। पर जरा ध्यान रहे—अंतर्राष्ट्रीय दर से आपको यह बातचीत बड़ी महँगी पड़ सकती है। पर यारी में भला पैसा भी कोई चीज है जिसकी परवाह की जाय।

आपको नयी मित्रता मुबारक हो (अलविदा)।

सच्ची मित्रता में उत्तम-से-उत्तम वैद्य की-सी निपुणता और परख होती है, अच्छी-से-अच्छी माता का-सा धैर्य और कोमलता होती है।

- आर्चाय रामचन्द्र शुक्ल

उपभोक्तावादी संस्कृति

डा० खगेन्द्र ठाकुर

जिसे लोग उपभोक्तावादी संस्कृति कहते हैं, वह असल में पूँजीवादी संस्कृति है। इस संस्कृति में मनुष्य का दर्जा इस बात पर निर्भर करता है कि किसके पास कितनी सम्पत्ति है, सुविधा और सम्पन्नता के साधन कितने हैं? पैदल चलने वाला आदमी छोटा और कार पर चलने वाला आदमी बड़ा। ट्रेन के दूसरे दर्जे में सफर करने वाला आदमी छोटा, प्रथम श्रेणी में या ए० सी० (द्वितीय) में सफर करने वाला उससे बड़ा और ए० सी० (प्रथम) में सफर करने वाला और भी बड़ा समझा जाता है तथा हवाई जहाज पर उड़ने वाला इन सबसे बड़ा माना जाता है। चटाई पर बैठने वाला छोटा और सोफासेट पर बैठने वाला बड़ा। इसी तरह जिसके पास टेलिविजन, रेफ्रिजरेटर आदि हैं, वह बड़ा, जिसके पास नहीं है, वह छोटा। मोटा और मामूली कपड़ा पहनने वाला आदमी मामूली और कीमती कपड़ा पहनने वाला आदमी कीमती।

आजकल एक विज्ञापन शहर के हर मुख्य चौराहे पर दिखायी पड़ता है - "वी०आई०पी० एटैची आपको वी०आई०पी० बनाती है।" स्वर्णाभूषण और बनारसी सिल्क, साउथ सिल्क, चाइनीज सिल्क, गार्डन सिल्क इत्यादि से सजी-धजी एवं इत्र-सेंट आदि से सुवासित महिला ऊँचे घराने की समझी जाती है। शराब-कबाव का भोग लगाने वाला सम्भ्रान्त और सादा भोजन वाला मामूली आदमी माना जाता है। यह वर्णन और भी लम्बा खिंच सकता है, लेकिन इतना ही काफी है यह बताने के लिए कि आदमी की चेतना किन चीजों से बँधती चली जा रही है। उपभोग की उपर्युक्त सारी चीजें मनुष्य के अभिजात्य के प्रतीक बन गयी हैं, सामाजिक प्रतिष्ठा के आधार बन गई हैं। हर आदमी अभिजात बनना और दिखना चाहता है, प्रतिष्ठा प्राप्त करना चाहता है। इसलिए अभिजात्य और प्रतिष्ठा की ऊँचाई पर पहुँचाने के लिए आदमी आज आदमियत के बदले सुविधा और सम्पन्नता के उपर्युक्त साधनों के पीछे बदहवास होकर दौड़ रहा है। इस दौड़ में मानव-मूल्य पीछे रह जाता है और उपभोग के सामान उसकी चेतना को, उसके व्यक्तित्व को दबोचे जा रहे हैं।

ध्यान देने की बात यह है कि जिन लोगों के पास उपभोग के ये साधन हैं उनसे भी बड़े वे लोग हैं जिनका कब्जा इन वस्तुओं को पैदा करने के साधनों एवं औजारों पर है। यदि एक कार का मालिक पैदल चलने वालों से बड़ा है तो कार बनाने के कारखाने का मालिक यानी पूँजीपति और भी बड़ा है। इसलिए इस समाज का सबसे बड़ा आदमी है पूँजीपति, सबसे बड़ा प्रभुत्वशाली आदमी है वह। वस्तुतः जिसके पास जितनी अधिक पूँजी है, समाज पर उसका उतना

अधिक दबदबा है, सरकार पर, उसके अधिकारियों पर और नेताओं पर उसका उतना प्रभुत्व है। ध्यान दें, उपभोग के सामान पैदा करने वाले साधनों के आधार पर मनुष्यों के बीच जो रिश्ता बनता है, वही सबसे मजबूत रिश्ता सिद्ध हो रहा है। पूँजी के साधनों और औजारों के मालिक पूँजीपति हैं और उन साधनों एवं औजारों का संचालन करके उत्पादन करने वाला श्रमिक या अभियंता या तकनीशियन-उसका मजदूर। इसीलिए ऐसे समाज की संस्कृति पूँजीवादी कहलाती है। जो लोग आधुनिक भारत में भी भारतीय संस्कृति की रक्षा की बात करते हैं, वे जाने-अनजाने इसी पूँजीवादी संस्कृति की रक्षा करते हैं। संस्कृति वस्तुतः मानवीय सम्बन्धों की अभिव्यक्ति है, भौतिक साधनों के स्वामित्व के स्वरूप की मानसिक अथवा चेतनागत अभिव्यक्ति है। इसलिए सामाजिक-आर्थिक बनावट से अलग कोई संस्कृति हो ही नहीं सकती। लेकिन, अभी हमारे देश में एक विचित्र बात यह चल रही है कि जो अपने बैठकखाने को अत्याधुनिक साधनों से सजा रहे हैं, शयनकक्ष को नये फैशन के पलंग और कालीन या कारपेट या लिनोलियम से अपटुडेट बना रहे हैं और अपने रसोई घर को गैस चूल्हा, ओवन, प्रेशर कुकर, मिक्सर, फिल्टर क्रशर इत्यादि से सम्पन्न बना रहे हैं, वे चेतना के मामले में वैदिक युग से लेकर सामन्त युग तक चक्कर लगाते रहते हैं, पेड़-पौधों के सामने हाथ जोड़कर नमन करते हैं या माथा टेकते हैं। इस प्रसंग में यह भी गौरतलब है कि जो इस तरह की चेतना से अभिभूत होकर भारत के अतीत का गौरवगान करते हैं, वे उपभोक्तावाद के वशीभूत होकर साम्राज्यवाद और उसके आर्थिक संगठन, बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के प्रवेश के लिए भारत माता का द्वार खोल देते हैं। यह उपभोक्तावाद और उसके मूलाधार पूँजीवाद का ही चमत्कार है कि भूतवादी भारतीय साम्राज्यवाद का मुकाबला करने की हैसियत खोता जा रहा है। यह उपभोक्तावाद पुनरुत्थानवाद और साम्राज्यवाद की मिलन-भूमि बन रहा है।

उपभोक्तावादी संस्कृति पूँजीवाद को मकरध्वज पिला रही है। उपभोक्तावाद का सामाजिक आधार है अभिजातवाद। पिछले चालीस वर्षों में विभिन्न स्तरों के पूँजीपति वर्ग के अलावा एक नया धनाढ्य वर्ग भी विकसित हुआ है। उसमें वे राजनीतिक नेता हैं जो लम्बे अरसे से पूँजीवादी राजसत्ता से सट कर सुख-सुविधा के साधन बटोरते रहे हैं, ऊँचे अधिकारी हैं जो चोर दरवाजे की कमाई से धन जमा करते रहे हैं, जिन्होंने कल-कारखानों में शेयर खरीदे हैं या पूँजीवादी फार्म बनाये हैं, वे इंजीनियर हैं जो योजनाओं में छेद करते रहे हैं और उन्हीं के साथ ठेकेदारों का अच्छा-खासा वर्ग पैदा हो गया है। इसमें वे बड़े भूस्वामी भी हैं, जिन्होंने खेती की पूँजीवादी पद्धति अपनाकर रहन-सहन का तरीका अपना लिया है। इस वर्ग में वे बड़े डॉक्टर और वकील भी आते हैं, जिनका पेशा काफी चल पड़ा है और जो अपनी कमाई का सही हिसाब आयकर विभाग को नहीं देते। इस वर्ग में वे शिक्षक भी आते हैं जो अपनी वेतनगत आमदनी के अलावा

भी और धंधे कर रहे हैं, जैसे : द्यूशन, कोचिंग इन्स्टीच्यूट आदि । कुल मिलाकर दो नम्बर की कमाई और काले धन वाले ऐसे उच्च वर्ग और मध्यम वर्ग के लोग अभिजात वर्ग का निर्माण करते हैं। ये लोग भी आम तौर से काम एवं उत्पादन की प्रक्रिया से अलग रहते हैं, अलग हो जाना इज्जत की बात समझते हैं । अपना काम खुद करने वालों को ये लोग हीन भाव से देखते हैं । यह अभिजात वर्ग पूँजीवाद के उपभोक्ता का बाजार बनाता है । भारत जैसे विशाल देश में महानगरों, नगरों, कस्बों और कुछ हद तक गाँवों में भी रहने वाले लगभग बीस करोड़ धनाढ्य लोग तत्काल भारतीय इजारेदारों और विदेशी बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के माल की बिक्री के लिए काफी समझे जा रहे हैं । जब भूतपूर्व प्रधानमंत्री राजीव गाँधी देश को इक्कीसवीं सदी में ले जाने की बात कर रहे थे तो उनके ध्यान में एक तरफ उपभोक्ता-माल पैदा करने वाले पूँजीपति थे तो दूसरी तरफ यही अभिजात वर्ग था । पूँजीपतियों के कारखाने कम्प्यूटरीकृत होकर इक्कीसवीं सदी में जायेंगे और फिर अभिजात वर्ग के रसोई घर, शयनकक्ष और बैठकखाने भी इक्कीसवीं सदी में जायेंगे । बाकी जनता ठेल दी जायेगी अट्ठारहवीं सदी में यानी लालटेन और बैलगाड़ी के युग में बिलबिलाने के लिए । इस प्रकार यह अभिजात वर्ग आम जनता से अलग-थलग होता जा रहा है । इस अभिजात वर्ग की चारित्रिक विशेषता है अपने और अपने बाल-बच्चों के लिए जीना । वे बस जीवन को अच्छी तरह भोगना चाहते हैं । किसी मूल्य के लिए वे नहीं जीते । मूल्यहीन जीवन भ्रष्ट होता है ।

यह अभिजात वर्ग उपभोगवादी वस्तुओं की उपलब्धि को ही जीवन की बड़ी उपलब्धि मानता है । इसलिए वह किसी और महत्त्वपूर्ण उपलब्धि के लिए प्रयत्न नहीं करता । चूँकि जीवन को मापने और तौलने का मानदंड उपभोग्य वस्तुएँ हैं, इसलिए राष्ट्र, संस्कृति और मानवता से जुड़े हुए मूल्यों का उसके लिए कोई मोल नहीं होता । किसी राष्ट्रीय, सांस्कृतिक या मानवीय मूल्य के लिए वह अपनी सुख-सुविधा में कटौती करने को तैयार नहीं है । इसलिए आम तौर से यह वर्ग मूल्यहीन होता है । लेकिन गौर से देखने पर पता चलता है कि यह वर्ग बाजार के मूल्य को ही जीवन मूल्य मान लेता है । बाजार की दृष्टि ही उसकी जीवन-दृष्टि है । उपभोक्तावर्ग या अभिजातवर्ग यथास्थितिवादी होता है । किसी भी तरह के बदलाव की कोशिश इस वर्ग को बेचैन कर देती है । यह वर्ग अपनी सुख-सुविधा की रक्षा के लिए परिवर्तन का विरोधी होता है । वह जन-आन्दोलन से, जनता के नारों से, जनता की बढ़ती हुई जनतांत्रिक भूमिका से घबराता है । प्रशासन में जमे बैठे इस वर्ग के प्रतिनिधि, इसी कारण, जन-आन्दोलन को कुचल देने में भी तत्पर रहते हैं । अतएव यह अभिजात वर्ग जनतंत्र विरोधी होता है । यों यह अजीब विशेषता भी इस वर्ग में है कि वह अपने को सबसे पक्का जनतंत्र प्रेमी समझता है और जनतंत्र का अपना अर्थ उसने बना रखा है । वह बोलने और आलोचना करने के अधिकार को ही जनतंत्र का चरम रूप

समझता है। यह स्वाभाविक है, क्योंकि जीने के साधन तो उसके पास भरपूर हैं ही। जनतंत्र को जीने के साधनों की उपलब्धता से जोड़ने की जरूरत वह समझता ही नहीं है। अभिजात वर्ग में ऐसे लोग भी जरूर हैं जो शारीरिक श्रम नहीं तो मानसिक श्रम अवश्य करते हैं, अपनी कमाई से जीवन चलाते हैं, लेकिन बाकी आय का जो काला स्रोत है, वह उसे अन्य मेहनतकशों से अलग करके पूँजीपति वर्ग की ओर उन्मुख कर देता है। फलस्वरूप मेहनतकश जनता की हर कार्रवाई को आम तौर से वह अपनी धारणा के जनतंत्र यानी पूँजीवादी जनतंत्र के लिए खतरनाक समझता है। इसी स्थिति और धारणा से प्रेरित होकर यह वर्ग वैज्ञानिक समाजवाद और उसके दर्शन मार्क्सवाद का विरोधी होता है। अभिजात वर्ग के काले स्रोत पर जरा भी आघात किसी कारण से किया जाता है तो उसे लगता है कि जनतंत्र खत्म हो रहा है, समाज खराब होता जा रहा है और प्रतिष्ठा खतरे में है। जब कभी पूँजीवादी घरानों पर छापेमारी की जाती है तब उनके बीच खलबली मच जाती है। इजारेदार के.के. बिड़ला ने एक बार अपने अखबार 'हिन्दुस्तान टाइम्स' में छापेमारी का जिक्र करते हुए एक लेख लिखा, जिसमें उन्होंने कहा कि अब किसी का जीवन सुरक्षित नहीं है, किसी की प्रतिष्ठा सुरक्षित नहीं है। सब कुछ खतरे में है। आज यहाँ छपा पड़ रहा है तो कल वहाँ। यह अराजकता है। देखिए, जब उद्योगपतियों और पूँजीपतियों के काले धन को अभी स्पर्श मात्र किया गया था तो बिड़ला को महसूस हुआ कि जीवन, प्रतिष्ठा, सब कुछ खतरे में है और समाज में अराजकता है। जब खेत मजदूर या अन्य मेहनतकश मारे जाते हैं, उनकी औरतों की इज्जत लूटी जाती है तब अभिजात वर्ग के शिरोमणि बिड़ला को जीवन और प्रतिष्ठा पर खतरा नहीं महसूस होता है और न अराजकता दिखायी पड़ती है। इस वर्ग का सरकार पर कितना भारी असर है, यह तो इसी से प्रकट है कि पूँजीपतियों ने हल्का-सा विरोध किया और छापेमारी बंद हो गई।

उपभोक्तावाद मनुष्य को केवल उपभोक्ता बनाकर छोड़ देता है। इसका नतीजा होता है कि वह मनुष्य को उसकी बुनियादी विशेषता से वंचित कर देता है। मनुष्य की बुनियादी विशेषता है निर्माण करना, निर्माण की कल्पना करना, निर्माण की योजना बनाना और इसी प्रक्रिया में सामाजिक बनना, अपनी और समाज की भी चेतना का विकास करना। मनुष्य और पशु के बीच यही बुनियादी फर्क है। उपभोक्तावाद इस फर्क को भी व्यावसायिक बनाकर पूँजीवादी स्वार्थ के अनुकूल बना देता है। कल्पना, योजना और निर्माण से वंचित मनुष्य अमानवीय हो जाता है। कल वह कोई भी दुष्कर्म कर सकता है, क्योंकि वह पारिवारिक, सामाजिक या मानवीय सम्बन्धों को कोई महत्त्व नहीं देता। इन सम्बन्धों की मर्यादा की दृष्टि से ऐसा मनुष्य संवेदनशून्य हो जाता है। आज के समाज में मानवीय संवेदना के अभाव की शिकायत तो सभी करते हैं, लेकिन उसके मूल स्रोत को समझना नहीं चाहते। संवेदनशील मनुष्य बिकाऊ नहीं हो सकता, दुष्कर्मी नहीं हो सकता, हत्यारा नहीं हो सकता, सम्प्रदायवादी और जातिवादी नहीं हो सकता।

अभिजात वर्ग मुख्यतः उपभोग करता है, निर्माण नहीं, इसलिए विचारधारा, संस्कृति, विज्ञान आदि किसी भी क्षेत्र में यह प्रगति के नये द्वार नहीं खोल सकता। इसकी परोपजीविता राष्ट्रीय आत्मनिर्भरता के लिए घातक साबित हो रही है। इसकी भोगवादी प्रवृत्ति समाज में व्यावसायिकता फैला रही है। पूरे समाज का व्यवसायीकरण हो रहा है। 'शुभ लाभ' की कसौटी पर हर वस्तु को, हर काम को, यहाँ तक कि हर विचार को परखा जा रहा है। अचक वस्तु, काम या विचार से क्या लाभ होगा? यह प्रश्न लोगों की जीवन-दृष्टि को व्यक्त करता है। 'शुभ-लाभ' की व्यावसायिक संस्कृति मनुष्य और समाज के सारे आत्मीय एवं पवित्र सम्बन्धों को नष्ट कर चुकी है। माता-पिता, भाई-बहन, गुरु, मित्र इत्यादि के साथ जुड़ी हुई उदात्त भावना अलाभकर बन चुकी है। फलतः हमारी पम्परा के स्वस्थ तत्त्व भी बाजार में बिक चुके हैं। खेद है कि लोग इसे महसूस नहीं करते हैं। दूरदर्शन इस व्यावसायिकता को बेतरह बढ़ावा दे रहा है। दूरदर्शन आधुनिक तकनीक की ऐसी जादुई पेटी है, जिसमें मनुष्य की चेतना को दूर-दूर तक प्रभावित करने की अपार क्षमता है। दूरदर्शन एक ऐसी आकर्षक हस्ती है, जिसे चालू करने के बाद आदमी को उसके पास बैठना पड़ता है और ध्यानमग्न होकर चुपचाप उसे देखते रहना और सुनते रहना पड़ता है। दूरदर्शन दृश्य और श्रव्य दोनों है। इसलिए अत्यन्त प्रभावशाली है। इस शक्तिशाली साधन की मदद से दूसरों की चेतना को प्रभावित करने की कला चमत्कारी बन गई है। हमारे दूरदर्शन में ऐसे धारावाहिक कार्यक्रम आयोजित किये जाते हैं, जो दर्शक को लगातार लपेटे रखें और उसके आगे-पीछे विज्ञापनों की भरमार होती है और दर्शक उसे भी उतने ही मनोयोग से देखता है जैसे मूल धारावाहिक को। दूरदर्शन से प्रसारित उन विज्ञापनों में आदमी जिन चीजों को लुब्ध होकर देखता है, उन्हें पाना भी चाहता है। वह दूरदर्शन में उपभोग की तरह-तरह की चीजों को ही नहीं देखता, बल्कि उपभोग करने वाले आदमी के साथ देखता है। सैकड़ों किस्म के फैशन के शानदार कपड़े पहने हुए लोगों को किसी समारोह, किसी पार्टी, किसी डिस्को-डांस में भाग लेते हुए देखता है, किस्म-किस्म के लुभावने भोज्य पदार्थ खाते हुए लोगों को देखता है, भव्य कोठियाँ देखता है, उनकी भड़कदार सजावट देखता है, आदि आदि। आदमी दूरदर्शन की इन चीजों के निकट दर्शन भी करना चाहता है। यह विज्ञापनबाजी की सफलता है, यह पूँजीवाद की सफलता है कि वह जोरदार ढंग से व्यावसायिकता फैलाता है, अपने माल के लिए बाजार बना रहा है और आदमी को भोगवादी बनाता है, भोग के सामान खरीद पाने की क्षमता अर्जित करने के लिए काला धन अर्जित करने की ओर बढ़ाता है। यह यों ही नहीं है कि दूरदर्शन के सारे कार्यक्रम किसी-न-किसी औद्योगिक या व्यावसायिक कम्पनी के द्वारा प्रायोजित किए जा रहे हैं। दूरदर्शन व्यवसाय का, व्यावसायिकता का माध्यम बन गया है। अन्धविश्वास का प्रसार इस व्यावसायिक भोगवादी संस्कृति का अभिन्न अंग है, क्योंकि अन्धविश्वास आदमी को यथास्थितिवादी

बनाता है जो अभिजात वर्ग के स्वार्थों के अनुकूल है। व्यावसायिक संस्कृति समाज की हर चीज को बिकाऊ बनाती है। वह समाज की जरूरत को नहीं, मुनाफे की जरूरत को व्यक्त करती है। यह उस दौर की संस्कृति है, जब आवश्यकता आविष्कार की जननी नहीं रही, बल्कि आविष्कार आवश्यकता का जनक है। आविष्कार के लिए बाजार बनाना उसका उद्देश्य है।

समाज की यथास्थितिवादी शक्तियों को 'तमस' से तो एतराज हो गया है, लेकिन 'होनी अनहोनी' या और भी ढेर सारे नुकसानदेह या निरर्थक कार्यक्रमों से नहीं। मनुष्य की चेतना शिथिल हो जाए तो उपभोक्तावाद और अभिजातवाद बेधड़क चलता रहता है, जमा रहता है। समाज की प्रगतिशील शक्तियों ने 'तमस' का समर्थन और 'रामायण' धारावाहिक का विरोध इसी दृष्टि से किया। 'रामायण' धारावाहिक का विरोध वस्तुतः रामायण या राम कथा का विरोध नहीं है। इस धारावाहिक के जरिये मनुष्य की चेतना को शिथिल करने वाले चमत्कारी अंधविश्वासों का प्रचार किया गया। राम के प्रति भक्ति-भाव रखने वाले नागरिकों की आस्था का राजनीतिक एवं व्यावसायिक उपयोग किया जा रहा है। राजनीतिक इसलिए कि मनुष्य जितना ही अंध-विश्वासग्रस्त होगा, उसकी चेतना जितनी ही शिथिल होगी, उतना ही वह परिवर्तन के संघर्ष से अलग होगा और व्यावसायिक इसलिए कि इस लोकप्रिय धारावाहिक को विज्ञापन बहुत मिल रहे हैं। यदि यह धारावाहिक रावणत्व के खिलाफ रामत्व के संघर्ष को सामाजिक धरातल पर मानवीय आदर्शों के साथ प्रस्तुत करता तो बड़ी बात होती। दुखद है कि इस महान सांस्कृतिक विरासत को व्यावसायिक राजनीति का माध्यम बना दिया गया।

अब यह कहने की जरूरत नहीं है कि भारतीय परम्परा एवं संस्कृति के स्वस्थ तत्त्वों को विकसित करने, राष्ट्रीय एवं मानवीय मूल्यों की रक्षा करने, महान मानवीय आदर्शों की प्रतिष्ठा करने, जनतंत्र पर आये खतरे का मुकाबला करने और राष्ट्र को प्रगति के रास्ते पर आगे बढ़ाने के लिए अभिजात वर्गीय मनोवृत्ति, व्यावसायिक संस्कृति, उपभोक्तावाद इत्यादि को पराजित करना जरूरी है। इस संघर्ष का अनिवार्य एवं अभिन्न सम्बन्ध तमाम तरह के मेहनतकशों की कार्रवाइयों से है, मेहनत को सम्मान देने वाले चिन्तन और दर्शन से है। इस सच्चाई से कतराने वाला भारतीय संस्कृति और जनतंत्र की रक्षा नहीं कर सकता, राष्ट्र को आगे नहीं ले जा सकता।

...

संस्कृति इस तरह मानव-जाति की वह रचना है जो एक को दूसरे के मेल में लाकर उनमें सौहार्द्र की भावना पैदा करती है। वह जोड़ती और मिलाती है। उसका परिणाम व्यक्ति में आत्मोपमता की भावना का विकास और समाज का सर्वोदय है।

- जैनेन्द्र कुमार



श्री ललन प्र. श्रीवास्तव
वरिष्ठ लेखा अधिकारी

मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से विश्लेषण करने पर यह स्पष्ट होगा कि मानव-स्वभाव प्रत्येक विषय या तथ्य के प्रति जिज्ञासु होता है। वह यह जानना चाहता है कि कोई भी कार्य या घटना क्यों होता है या कैसे होता है। जिज्ञासा-पिपासु होने के कारण ही मानव अपने चारों ओर नित्य-प्रति घटित होने वाली घटनाओं के क्यों और कैसे के समाधान के लिए व्यग्र रहता है और उस ज्ञान की प्राप्ति के लिए सतत प्रयत्नशील एवं क्रियाशील रहता है। आदिकाल से ही मानव की इसी क्रियाशीलता तथा ज्ञान प्राप्ति की प्रवृत्ति ने उसे लौकिक-पारलौकिक तथ्यों या घटनाओं की ओर सोचने के लिए विवश किया। फलस्वरूप आकाश में दिखने वाले सूर्य, चन्द्रमा, तारे आदि के विषय में जानने की उसकी तीव्र लालसा ने उससे खगोलशास्त्र, ज्योतिषशास्त्र जैसे ग्रंथों के निर्माण कराये।

मानव-जीवन में ज्योतिषशास्त्र का क्या स्थान है तथा इसकी कितनी उपयोगिता है, अगर इसका विश्लेषण किया जाय तो एक बात स्पष्ट रूप से स्वीकार की जा सकती है कि भारतीय ज्ञान की पृष्ठभूमि दर्शनशास्त्र की बुनियाद पर खड़ी है, जहाँ आत्मा को अमर कहा गया है। अमर यानी नित्य। नित्य वह है जिसका कभी नाश नहीं होता है आत्मा अमर है किन्तु कर्मों के अनवरत प्रवाह के कारण वह अनेक स्वरूपों में युग-युगान्तर से परिवर्तित होता आ रहा है और आगे भी यह क्रम चलता रहेगा। वैदिक दर्शनों में धर्म के संचित, प्रारब्ध और क्रियमाण ये तीन भेद माने गये हैं। प्राणी द्वारा वर्तमान क्षण तक किया गया जो कर्म है वह इस जन्म में किया गया कर्म तथा पूर्व जन्मों में किये गये कर्मों का योगफल है जिसे संचित कर्म कहते हैं। इसी संचित कर्मों के फल को प्राणी अपने जन्म-जन्मान्तरों तक भोगता है किन्तु सारे संचित कर्मों को एक साथ या एक ही जन्म में भोग पाना सम्भव नहीं हो पाता है। संचित कर्मों में से क्रमानुसार ही फल भोगना पड़ता है। जितने कर्मों का फल पहले भोगना प्रारम्भ होता है, उसे या उतने ही कर्मों को प्रारब्ध कहते हैं। कर्म का तीसरा भेद क्रियमाण-वह कर्म है जो कर्म अभी हो रहा है या किया जा रहा है। इन तीन प्रकार के कर्मों के कारण ही आत्मा को इन्हें भोगने हेतु योनि बदलनी पड़ती है जिन्हें दार्शनिक भाषा में पुर्नजन्म की संज्ञा दी गई है। योनि बदलने के बाद आत्मा अपने संचित कर्म

को भूल जाता है जो उस भौतिक शरीर की विशेषता है जिसमें आत्मा निवास करता है । भारतीय ऋषि-महर्षियों ने आत्मा को इसी दृष्टिकोण से परखा है तथा अपने अनुभव एवं दिव्य-दृष्टि से, ज्योतिष के परिप्रेक्ष्य में आत्मा को वर्तमान भौतिक देह में रहकर भी, एक से अधिक जगत् से इसे सम्बंधित माना है । मनुष्य के इस भौतिक शरीर को उन्होंने तीन उप-शरीरों में विभाजित किया है जिन्हें ज्योति, मानसिक एवं पौद्गालिक जाना जाता है । ये तीनों उप-शरीर क्रमशः नाक्षत्र जगत् मानसिक जगत् एवं भौतिक जगत् से जुड़े हैं । उपर्युक्त कथन से यह स्वतः सिद्ध होता है कि मनुष्य तीनों जगत् से यानी नाक्षत्र, मानसिक एवं भौतिक जगत् से प्रभावित होता है जिसके परिणाम स्वरूप उसके व्यक्तित्व का निर्माण होता है । यह एक दार्शनिक दृष्टिकोण है जिसे आत्मा के सम्बंध में हमारे मनीषियों ने देखा है, अनुभव किया है ।

जब हम मनोविज्ञान की बात करते हैं तो पाते हैं कि वहाँ मानव के भावों, विचारों तथा संवेगों को समझने के लिए उसके व्यक्तित्व को दो भागों में विभाजित किया गया है—वाह्य व्यक्तित्व एवं आन्तरिक व्यक्तित्व । ध्यान देने की बात है कि उक्त विभाजन आत्मा की क्रिया विशेषता के कारण ही सम्भव दीखता है क्योंकि आत्मा-विहीन शरीर जड़ है जिसमें किसी प्रकार की अनुभूति होने का प्रश्न ही नहीं है ।

मनोविज्ञान के अनुसार वाह्य व्यक्तित्व वह है जो भौतिक शरीर के रूप में संसार में उत्पन्न हुआ है तथा आत्मा की चैतन्य क्रिया के कारण अपने पूर्व जन्म के निश्चित प्रकार के विचार, भाव और क्रियाओं की ओर झुकाव तो पैदा करता रहता है किन्तु इस जीवन के अनुभवों के द्वारा भी अपने व्यक्तित्व का क्रमिक विकास करता हुआ आन्तरिक व्यक्तित्व में मिलने के लिये प्रयत्नशील रहता है । आन्तरिक व्यक्तित्व वह है जो अनेक वाह्य व्यक्तियों की स्मृतियों, अनुभवों और प्रवृत्तियों को अपने-आप में संभाल कर रखता है । दूसरे शब्दों में, हम यह भी कह सकते हैं कि आन्तरिक व्यक्तित्व वाह्य जगत् के संचित एवं क्रियमाण कार्यों अनुभवों एवं विचारों को अपने में संजोकर रखता है ।

मनुष्य अपने आन्तरिक और वाह्य दोनों प्रकार के व्यक्तित्व में एकरूपता लाने का प्रयास करता है । ज्योतिष सिद्धान्त के अनुसार वाह्य व्यक्तित्व के तीनों रूपों यथा; भाव, विचार और क्रिया तथा आन्तरिक व्यक्तित्व के तीनों रूपों, स्मृति, अनुभव और प्रवृत्ति को, अन्तःकरण एक रूप में संगठित करता है । इन रूपों के प्रतीक सौर-जगत् में रहने वाले सात ग्रहों को माना गया है जिनके प्रभाव-मात्र से मानव जीवन का सम्पूर्ण रूप उसके व्यक्तित्व की शक्ति में प्रकट होता है । दूसरे शब्दों में, जीव या प्राणी की उन्नति या अवनति इन ग्रहों, नक्षत्रों आदि के प्रभाव के कारण प्रभावित होते हैं । चूँकि प्रत्येक मानव के कर्म एक जैसे नहीं होते हैं इसलिए प्रतीक रूपी

ये सातों ग्रह भी प्रत्येक मानव पर एक जैसा न प्रभाव डालते हैं और न डाल सकते हैं। प्रतीक रूप इन ग्रहों द्वारा डाले गये प्रभाव के अनुसार ही फल प्रकट होते हैं।

मानव-जीवन हर्ष-विषाद, सुख-दुःख, बाधा-तनाव इत्यादि से भरा है। इसका आने वाला प्रत्येक क्षण रहस्यपूर्ण है। मनुष्य अपने भविष्य के विषय में अधिकाधिक जानकारी प्राप्त करना चाहता है। जीवन में घटने वाली भावी घटनाओं के प्रति वह सजग रहना चाहता है। आदिकाल से ही प्रकृति के द्वारा लाये गये उपद्रवों, प्रकोपों से भयभीत मानव इनका सम्बंध पारलौकिक कारणों से स्थापित करता रहा है। किन्तु ज्यों-ज्यों मानव जाति ने अपना विकास किया, वेद वेदांगों का अध्ययन किया वह प्रकृति के गूढ़ रहस्यों का उद्घाटन करने में धीरे-धीरे समर्थ होने लगा। सर्वप्रथम जब भारतीय महर्षियों की दृष्टि आकाश मंडल पर पड़ी तब वे वहाँ स्थित ग्रह-नक्षत्रों, तारा-मंडलों को देखकर भयभीत हो गये और उन्हें देवत्व का रूप दे दिया। वेदों में सूर्यादि ग्रहों की स्तुति देव-रूपों में की गई है। कालान्तर में जैसे-जैसे इन महर्षियों की दृष्टि स्पष्ट होती गई वैसे-वैसे अपनी दिव्य दृष्टि-और ज्ञान के आधार पर अध्ययन करके उन लोगों ने मानव की सृष्टि के मूल रहस्यों को परखना प्रारम्भ किया और अनुभव किया कि इन ग्रहों-नक्षत्रों का सीधा प्रभाव मानव पर पड़ता है फलतः सुख-दुःख, हानि-लाभ, उन्नति-अवनति आदि से वह बंधा रहता है, और इसी क्रम में ज्योतिष शास्त्र का विकास प्रारम्भ हुआ जिसके दो पक्ष हैं-गणित और फलित। ग्रहों की गति, नक्षत्रों एवं राशियों में उनका भ्रमण आदि का अध्ययन गणित पक्ष के रूप में विकसित हुआ और इन ग्रह-नक्षत्रों की रश्मियों के प्रभाव के फलस्वरूप मानव-जीवन में घटने वाली घटनाओं के रहस्यों का उद्घाटन फलित-पक्ष हुआ।

व्यक्ति की जन्म-कुण्डली एक प्रकार से आकाशीय ग्रह नक्षत्रों का मानचित्र होता है। जन्म के समय बालक पर जिस ग्रह की या जिस राशि की छाया पड़ेगी बालक का स्वभाव और चरित्र भी उसी ग्रह-राशि के अनुरूप होगा ऐसा ज्योतिषशास्त्र का मत है। किन्तु फल कथन मात्र इतना ही नहीं है बल्कि सही एवं प्रामाणिक फल कथन के लिए अन्य कई आवश्यक तथ्य हैं जिन्हें ध्यान में रख कर यथा ग्रहों के बलाबल उनकी दृष्टि, मैत्री आदि का विचार करके फल प्रतिपादित किया जाता है।

ज्योतिष में काल-गणना भी महत्वपूर्ण है। काल की सूक्ष्म ईकाई की गणना ज्योतिष शास्त्र में की गई है। इसी काल-गणना में निरूपित तथ्यों के आधार पर भविष्यवाणियाँ की जाती हैं कि अमुक समय या काल व्यक्ति विशेष के लिये कितना अनुकूल या प्रतिकूल होगी। इस प्रकार ज्योतिष द्वारा मानव-जीवन के छोटे-बड़े कार्य के पीछे ग्रह-नक्षत्रों का पूरा-पूरा प्रभाव है, महर्षियों ने सिद्ध किया।

प्रारम्भिक काल में ग्रहों के द्वारा या यों कहें कि मात्र ग्रहों के आधार पर ही मानव जीवन के भविष्य को स्पष्ट किया जाता था। ज्योतिषशास्त्र के क्रमिक विकास के फलस्वरूप इसमें सूक्ष्मता आती गई और कालान्तर में ग्रहों के बारह राशियों में भ्रमण के कारण ग्रह-राशि के परस्पर सम्बन्ध से उत्पन्न होने वाले प्रभाव को ध्यान में रखकर फल-निरूपण किया जाने लगा। बाद में और अधिक सूक्ष्मता आने पर नक्षत्र-ज्योतिष के विकास के फलस्वरूप फल-कथन में न केवल सूक्ष्मता आयी बल्कि यह और अधिक प्रामाणिक और सत्य होता गया। आज से करीब एक हजार वर्ष पूर्व यानी ग्यारहवीं शताब्दी में एक नई पद्धति-विकसित हुई जिसके अन्तर्गत ग्रह बल, ग्रह वर्ग, दशा-अन्तर्दशा आदि के माध्यम से फल-कथन स्पष्ट किया जाने लगा और तब से आज तक इन्हीं सिद्धान्तों के आधार पर ज्योतिष में फल प्रतिपादित किया जाता है।

ज्योतिष में फल-कथन या फल-प्रतिपादन ग्रह-नक्षत्रों तथा राशियों के प्रभाव पर आधारित है, किन्तु ज्योतिष द्वारा फल-प्रतिपादन की सत्यता को लेकर काफी मतभेद है। आज के वैज्ञानिक युग में जहाँ एक ओर मानव इन ग्रहों पर पहुँचने का कीर्तिमान स्थापित कर चुका है तथा इन ग्रहों-उपग्रहों के सम्बन्ध में काफी रोचक तथ्य एकत्रित कर चुका है वहीं ज्योतिषी इन्हीं ग्रह-नक्षत्रों को ज्योतिषशास्त्र का नियामक मानकर सारे फल-कथन इन ग्रह-नक्षत्र और राशियों के गुण-स्वभाव के आधार पर किया करते हैं जो वस्तुतः कोई देव या अलौकिक वस्तु नहीं रह गये हैं। ज्योतिष सिद्धान्त द्वारा फल-कथन को लेकर एक आक्षेप यह भी होता है कि इसका कोई वैज्ञानिक आधार नहीं है। समान परिस्थिति में फल-निरूपण समान नहीं होता है जो अवैज्ञानिक है और जो अवैज्ञानिक है वह मान्य नहीं हो सकता। ऊपर कही गई बातें सही दीखती हैं क्योंकि आज का विकसित मानव प्रत्येक तथ्य घटना या रहस्यों को तर्क की कसौटी पर खड़ा उतरते देखने का अभ्यस्त हो चुका है, अतः जब कोई बात तर्क से परे होती है तब उसका विवेक उसे स्वीकार करने को तैयार नहीं होता है और ऐसी बातों को वह अंधविश्वास के रूप में ग्रहण करता है।

उपर्युक्त विवेचन से ज्योतिष द्वारा फल-कथन की सत्यता की प्रामाणिकता पर संदेह होना स्वाभाविक है किन्तु ध्यान से देखा जाय तो ज्योतिष-शास्त्र के विषय में लोगों की यह अवधारणा भी सही नहीं है। इसका प्रमुख कारण है ज्योतिष शास्त्र से यह आशा करना कि मानव-जीवन में घटित होने वाली सभी घटनाओं का बेवाक चित्रण कर दिया जाय। ऊपर कहा गया है कि ज्योतिष शास्त्र के दो प्रबल पक्षों में प्रथम पक्ष गणित है। इस गणित पक्ष की विश्वसनीयता को आज वैज्ञानिक भी मानते हैं जिसमें सूर्य, चन्द्र, पृथ्वी आदि ग्रहों उपग्रहों की गति के फलस्वरूप आज वैज्ञानिक भी मानते हैं जिसमें सूर्य, चन्द्र, पृथ्वी आदि ग्रहों उपग्रहों की गति के फलस्वरूप ग्रहण के निश्चित समय की भविष्यवाणियाँ सदैव सत्य होती आ रही हैं। फलतः ज्योतिष की साख को बिलकुल नकार देना ईमानदारी नहीं हो सकती। ज्योतिष का दूसरा पक्ष फलित ज्योतिष है किन्तु आदि ग्रंथों की अनुपलब्धता तथा इस शास्त्र का व्यवसायीकरण दोनों मिलकर इसकी

प्रामाणिकता को सँदिग्ध करने में सहायक हैं। इतना ही नहीं, इस शास्त्र का विधिवत् अध्ययन, चिन्तन-मनन और अनुभव की कमी के कारण भी यह विषय अत्यन्त जटिल और दुरुह बनकर यथार्थता जिसे हम प्रयोगशाला की यथार्थता या वैज्ञानिक यथार्थता कहते हैं, उस पर प्रश्न-चिन्ह लगा देता है। वस्तुतः ज्योतिष-शास्त्र मात्र दो-चार पुस्तक पढ़कर या आज के कम्प्यूटर युग में कुछेक नियामकों को संग्रहित कर फ्लौपी में भरकर फल-कथन करने का प्रयास ही लोगों के मन में अविश्वास पैदा करता है क्योंकि ऐसी भविष्यवाणियाँ अचूक हो ही नहीं सकतीं। यही कारण है कि इस शास्त्र को लोग अवैज्ञानिक एवं अंधविश्वास मानते हैं।

सभी अपना भविष्य जानना चाहते हैं; वैज्ञानिक भी इसके अपवाद नहीं हैं। वैज्ञानिक भी अपने तरीके या साधन से खोज में जुटे रहते हैं। अनुसंधान के क्रम में आज का सत्य कल गलत सिद्ध हो जाता है। विज्ञान में ऐसे अनेक उदाहरण भरे पड़े हैं। अणु और परमाणुवाद का सिद्धान्त भी टूटकर बिखर गया और परमाणु जो पदार्थ के सूक्ष्मतम कण माने जाते थे न्यूट्रोन, प्रोटोन और इलक्ट्रॉन में बदल गये। तब कोई इसे अंधविश्वास या अवैज्ञानिक नहीं मानता। इसका क्या कारण है? इसका कारण एक ही है वह यह कि विज्ञान का सुनियोजित अध्ययन और अनुसंधान सदैव होता रहता है। सभी घटनाओं तथा तथ्यों का विश्लेषण प्रत्यक्ष देखा या महसूस किया जाता है। निर्धारित नियामकों या मापदण्डों से जो परिणाम निकाले जाते हैं उनका शत-प्रतिशत सही होना विज्ञान की सत्यता को स्वयं प्रमाणित करता है। यहां किसी भ्रम या संदेह का स्थान नहीं है। यदि इसे एक वाक्य में समझें तो यही कहा जा सकता है कि विज्ञान का विधिवत् अध्ययन, चिन्तन-मनन तथा सुयोग्य व्यक्तियों द्वारा किये गये अनुसंधान, वैज्ञानिक परिणाम की सत्यता में सहायक हुए हैं, किन्तु ज्योतिष शास्त्र में इन तत्त्वों का लोप होते जा रहा है फलतः इसकी विश्वसनीयता पर अगर प्रश्नचिन्ह लगता है तो यह कोई गलत बात नहीं है।

अन्त में इतना ही कहा जा सकता है कि अगर ज्योतिष शास्त्र पर दृष्टि डालें तो स्पष्ट पता चलता है कि प्राचीनकाल में भारतीय ऋषि-मुनियों ने अपने दिव्य नेत्रों से ग्रह पथ पर भ्रमण करने वाले ग्रहों का अवलोकन करके मानव जाति पर उसका प्रभाव स्पष्ट करते हुए उत्तम कोटि की प्रतिभा का परिचय दिया था। ज्योतिष में आ रही शिथिलता वैसे ज्ञानी-ऋषियों की कमी है, वेधशालायें एवं साधनों का अभाव है जिस कारण भविष्यवाणियाँ अचूक नहीं हो पाती हैं और यही कारण है लोगों की आस्था इससे दूर होती जा रही है। किन्तु, यह भी सत्य है यदि सूक्ष्म निरीक्षण से इस शास्त्र का विधिवत् अध्ययन किया जाय तो निःसंदेह ज्योतिष द्वारा की गई भविष्यवाणियाँ भी विज्ञान की तरह अचूक होगी।

शत-शत नमन

श्री नरेन्द्र कुमार सिंह 'नाहर'
वरिष्ठ लेखाकार

चेतना



मातृभूमि की बलिवेदी पर
किया जिन्होंने अपना जीवन अर्पण
उन वीरों को, उन धीरों को, उन शहीदों को
मेरा शत-शत नमन, शत-शत नमन ।

जय हिन्द,
जय जवान, जय किसान, जय विज्ञान,
दिया जिन्होंने हमें प्राण दान
करके अपना जीवन हवन
उन्हें मेरा शत-शत नमन
शत-शत नमन, शत-शत नमन ।

कौन कहता है भारत खतरे में है
जबतक कुर्बानी का जज्बा
हमारे खून के कतरे-कतरे में है
तबतक कौन कहता है—
भारत खतरे में है ?

कोई नहीं छीन सकता हमसे
कारगिल, द्रास और बटालिक
जबतक जीवित हैं जाबांज भारतीय सैनिक
जन जीवन की खातिर जिनका सारा जीवन समर्पण
उन्हें मेरा शत-शत नमन, शत-शत नमन ।

हिंसा में हम विश्वास नहीं करते
लेकिन हिंसा का मुँहतोड़ जवाब देना जानते हैं
अपने दुश्मनों की नस्ल पहचानते हैं
हिंसा का जिन्होंने वीरता से किया शमन
उन्हें मेरा शत-शत नमन, शत-शत नमन ।

हमने अकारण किसी को नहीं सताया
हमने हमेशा दुश्मनों को पहले समझाया
न मानने पर उन्हें मौत की गोद सुलाया
जिन्होंने किया देशभक्ति का यह पठन,
उन्हें मेरा शत-शत नमन, शत-शत नमन

हम जब भी शत्रु पर अस्त्र उठाते हैं
मानवता के महागुणों की सत्ता भूल न पाते हैं
रण में मारे गये शत्रु-शव को भी
ऊँची, बर्फीली चट्टानों में जिन्होंने किया दफन
उन्हें मेरा शत-शत नमन, शत-शत नमन ।

भारत संत तपस्वियों का देश रहा है
भुजाओं से ज्यादा महत्त्व हृदय की पवित्रता को दिया है
फिर भी हमारी संस्कृति ने शास्त्र के साथ शस्त्र,
तप के साथ तलवार का समन्वय स्वीकार किया है ।
दिया जिन्होंने विश्व को ऐसा दर्शन,
उन्हें मेरा शत-शत नमन शत-शत नमन ।

देश की अक्षुण्णता पर हो कुर्बान
जय भारतीय वीर जवान ।
सम्पूर्ण देश को दिया अन्न-दान
जय भारतीय धीर किसान ।
समस्त विश्व को दिया प्रगति यान
जय भारतीय ज्ञान-विज्ञान ।

करके दुश्मनों के नापाक इरादों का अंत
फैलाकर सत्य, अहिंसा, शान्ति का
मंत्र दिग-दिगन्त
किया जिन्होंने ऐसा प्रणयन
उन वीरों को, उन धीरों को, उन हीरों को
मेरा शत-शत नमन, शत-शत नमन,
शत-शत नमन ।



मनोज कुमार "हँसमुख"
लिपिक, टाइपिंग पुल

- भैया, अपना यह पड़ोसी बच्चा अपनी माँ को मम्मी न कह कर मम्मा क्यों कहता है। भाई-तुम इतना भी नहीं जानती पतली को मम्मी और मोटी को मम्मा कहते हैं।
- दीदी, हम बैंड तो बहुत-से देख चुके हैं और सुन चुके हैं लेकिन, हसबैंड कैसा बैंड होता है? बहन-बैंड तो लकड़ी और हाथ से बजाया जाता है, लेकिन हसबैंड वो बैंड है जिसे पत्नी चिमटा और बेलन से बजाती है।
- दो मित्र, दो लड़कियों का पीछा करते हुए ए.जी. के कार्यालय के सामने से मीठापुर पहुँच गये। दोनों लड़कियों ने आपस में कुछ विचार किया और एक ने पूछा-भाई साहब, आपको किसी प्रकार की दिक्कत तो नहीं है? आप दोनों हमारा पीछा क्यों कर रहे हैं? लड़के ने जल्दबाजी में कहा-नहीं, मुझे किसी प्रकार की दिक्कत नहीं है। दोनों लड़कियाँ आगे बढ़ गयीं। फिर भी दोनों लड़कों ने पीछा न छोड़ा, तो वे दोनों राखी की एक दुकान पर खड़ी हो गईं। दोनों लड़के भी दुकान पर जाकर खड़े हो गये। फिर दोनों लड़कियों ने एक-एक राखी दुकान से लेकर दोनों लड़कों को बाँध दी और आगे बढ़ गईं। फिर भी दोनों ने देखा कि लड़के पीछे चले आ रहे हैं तो एक ने पूछा-अब क्या दिक्कत है, भाई साहब? लड़के ने जवाब दिया पहले किसी प्रकार की दिक्कत नहीं थी, लेकिन अब हो गई है, बहन जी। हम दोनों दोस्त ने फैसला किया है कि इसकी बहन से (अपने दोस्त की ओर इशारा करते हुए) यानी इनसे मैं विवाह कर लेता हूँ और यह हमारी बहन यानी आप से विवाह कर लेगा।
- दो-तीन दोस्त आपस में गप मार रहे थे। एक ने बोला-यार, मैं गर्म चाय एक बार में एक गिलास एक सूर में पी जाता हूँ। तब दूसरे ने बोला-मैं तो चूल्हे पर गर्म हो रही चाय पी लेता हूँ। तीसरे दोस्त से रहा न गया तो बोला-मैं चाय पत्ती, चीनी, और दूध एक साथ मिला कर पी जाता हूँ और चूल्हे पर बैठ जाता हूँ।
- एक सरदारजी अपने सिर की जूँ से बहुत परेशान थे। एक भी जूँ-पकड़ में नहीं आती थी। संयोग से एक जूँ (नर) पकड़ में आ ही गई। उसे हथेली पर रख क्रांथ में बोले-मार दिया जाय कि छोड़ दिया जाय, बोल तेरे साथ क्या सलूक किया जाय। यह सुन कर जूँ की जोड़ी (मादा) उनके सिर के बालों से लटकते हुए कुछ इस प्रकार से बोली-हुस्न हाजिर है मोहब्बत की सजा पाने को, कोई पत्थर से न मारे मेरे दिवाने को। सरदार यह सुनकर द्रवित हो उठे और अपनी हथेली को सिर से लगा अपने बालों में मिलाते हुए बोले-चले जा चले जा....चले जा....जहाँ प्यार मिले....जहाँ प्यार मिले।
- एक नशाखोर नशे में डगमगाता हुआ चला जा रहा था तो एक भैंस से टकरा गया और घबराकर बोला-माफ कीजियेगा, बहन जी। ऐसा सुन कर कई लोग, जो वहाँ थे, हँस पड़े। वह बहुत लज्जित हुआ और आगे बढ़ गया। एक जगह एक मोटी औरत से टकरा गया और नाराज होते हुए बोला न जाने कितने लोग कितनी ही भैंसों को रोड पर खुली छोड़ देते हैं।

...

प्रशासन-एक मजबूत कड़ी

सूर्य मोहन प्रसाद
संले० अधिकारी

कार्यालय में किये जाने वाले कार्यों को व्यवस्थित एवं सुचारु रूप से चलाने तथा उन पर निगरानी रखने हेतु एक सुदृढ़ प्रशासन की आवश्यकता होती है। साथ ही मुख्यालय से प्राप्त निदेशों को समय सीमा के अन्तर्गत अनुपालन कराने हेतु आवश्यक निदेश प्रशासन द्वारा दिये जाते हैं। इसके अतिरिक्त कार्यालय द्वारा किए गये क्रिया-कलापों से मुख्यालय को समय-समय पर अवगत कराना भी होता है।

इसी उद्देश्य से महालेखाकार (ले.एवं ह.)-I, बिहार, पटना कार्यालय में भी एक प्रशासन अनुभाग की व्यवस्था है, जो तीन स्कन्धो यथा - पेंशन, जी.ई. एवं निधि के कार्य-संचालन में एक कड़ी का काम करता है। इस कार्यालय में प्रशासन अनुभाग उप महालेखाकार (प्र.) के अधीन कार्य करता है, तथा प्रशासनिक कार्यों की समीक्षा समय-समय पर महालेखाकार महोदय द्वारा भी की जाती है। अतः प्रशासन महालेखाकार कार्यालय में एक मजबूत कड़ी के रूप में कार्य करता है।

प्रशासन अनुभाग का मुख्य कार्य कार्यरत अधिकारियों एवं कर्मचारियों की सूची तैयार करना होता है जो विभिन्न पदों पर कार्यरत है। उक्त कर्मचारियों का मासिक प्रतिवेदन प्रधान महालेखाकार (ले.एवं ह.)-I, राँची के माध्यम से मुख्यालय भेजा जाता है। इसके अलावा कार्यरत कर्मचारियों को विभिन्न मदों में भुगतान हेतु एक वार्षिक बजट तैयार किया जाता है जिसकी संस्वीकृति मुख्यालय के कार्यालय से प्राप्त की जाती है। प्रत्येक माह में किये गये व्यय शीर्ष की विवरणी मुख्यालय को "फ्लोपी" प्रतिवेदन के साथ भेजी जाती है। प्रशासन ही प्रत्येक स्कन्ध में किये गये कार्यों की विवरणी प्राप्त कर आई.टी.ए. अनुभाग द्वारा मुख्यालय के कार्यालय को सूचित करता है।

कार्यालय के काम-काज को सुचारु एवं सुव्यवस्थित रूप से चलाने के लिए मुख्यालय से प्राप्त निदेशों की जानकारी सभी स्कन्धों एवं अनुभागों में दी जाती है तथा उन निदेशों का अनुपालन

सुनिश्चित भी कराया जाता है। साथ ही प्रशासन द्वारा समय-समय पर अनुभाग के कार्यों की समीक्षा हेतु सभी रजिस्ट्रों की जाँच करायी जाती है। दोषी अधिकारी/कर्मचारी के विरुद्ध अनुशासनिक कार्रवाई की जाती है तथा उनसे स्पष्टीकरण मांगा जाता है। साथ ही कर्मचारियों की कार्यक्षमता को बढ़ाने के लिए अधिकारी/कर्मचारी को प्रोत्साहन के रूप में मानदेय भी दिया जाता है।

कार्यालय में प्राप्त सभी पत्रों/कागजातों को रेकॉर्ड अनुभाग के माध्यम से ई.डी.पी. सेल में भेजने की व्यवस्था की गयी है। इसका मुख्य उद्देश्य यह है कि सभी रेकॉर्ड्स को कम्प्यूटर में दर्ज कर संबंधित अनुभाग में भेजा जाय, ताकि अनुभाग द्वारा दिये गये कार्य-कलापों पर प्रशासन द्वारा नियंत्रण रखा जा सके। कार्यालय में एक शिकायत कक्ष (ग्रीभान्स सेल) मुख्यालय के निदेशानुसार की स्थापना की गयी है, ताकि कार्य निष्पादन में विलम्ब नहीं हो। आगंतुक, कर्मचारियों की शिकायतों एवं कठिनाइयों को सुनने हेतु शिकायत कक्ष में अधिकारी एवं कर्मचारी प्रतिनियुक्त किये जाते हैं। वे आगंतुक की शिकायतों एवं कठिनाइयों को दूर करने का भरपूर प्रयास करते हैं। जिसके कारण कार्यालय की गरिमा बढ़ी है। पेंशनादि कार्यों के निष्पादन से संबंधित सूचना शिकायत कक्ष में स्थित सूचना पट्ट पर प्रतिदिन दर्शायी जाती है जिससे आगंतुक अधिकारियों एवं सेवा-निवृत्त कर्मचारियों को आवश्यक सूचना आसानी से प्राप्त हो जाती है। जी.ई. अनुभाग एवं पेंशन अनुभाग में कार्यों के यथाशीघ्र निष्पादन हेतु वरिष्ठ उपमहालेखाकार तथा उपमहालेखाकार द्वारा समय-सीमा का निर्धारण किया जाता है; ताकि कार्यों के निष्पादन में विलम्ब नहीं हो। इस प्रकार मुख्यालय के निदेश का पूर्णतः पालन हो जाता है। कर्मचारियों की कार्यकुशलता को विकसित करने हेतु कार्यालय परिसर स्वच्छ एवं प्रदूषण मुक्त है, कल्याण अनुभाग को हैं। कर्मचारियों को मिलने वाली सरकारी आर्थिक सुविधा के संबंध में प्रशासन सर्वदा तत्पर रहता है। कार्यालय में सभी कर्मचारी बिना कोई भेदभाव के अपना कार्य जिम्मेदारी के साथ सहर्ष सम्पादित करते हैं। प्रशासन सभी नियंत्रण अनुभागों पर अपनी निगरानी लगातार एवं सशक्त रूप में रखता है। नियंत्रण स्कन्धों से त्रैमासिक प्रगति रिपोर्ट मांगी जाती है। वर्ष के अन्त में एक प्रशासनिक रिपोर्ट तैयार की जाती है जिसमें सभी स्कन्धों में किये गये कार्यों को दर्शाया जाता है। दूसरे शब्दों में, प्रशासन के लिए प्रशासनिक रिपोर्ट कार्यालयों में किये गये कार्यों का प्रतिबिम्ब स्वरूप है। प्रशासनिक रिपोर्ट की प्रति मुख्यालय एवं प्रत्येक महालेखाकार (ले.एवं.ह.) कार्यालयों में भेजी जाती है, जो एक दूसरे के लिए मार्ग दर्शन का कार्य करता है।

इसके अतिरिक्त कर्मचारियों में कार्य कुशलता बढ़ाने एवं नियमों की जानकारी हेतु कार्यालय परिसर में एक प्रशिक्षण केन्द्र की स्थापना प्रशासन द्वारा की गयी है, जिसे "इन हाऊस ट्रेनिंग"

कहते हैं। सुयोग्य अधिकारी/कर्मचारी द्वारा अन्य कर्मचारियों को नियमों तथा उनके अनुपालन का प्रशिक्षण दिया जाता है, जिससे कार्यालय में कर्मचारियों की कार्यकुशलता में उत्तरोत्तर वृद्धि हो रही है।

अन्त में प्रशासन केन्द्रीय राजभाषा विभाग के निदेश के आलोक में हिन्दी प्रचार एवं प्रसार के लिए सतत प्रयत्नशील है। इस कार्य के लिए एक हिन्दी कक्ष की स्थापना की गयी है तथा उसमें सुयोग्य अधिकारी एवं कर्मचारी की पदस्थापना भी की गयी है। हिन्दी कार्यशाला एवं हिन्दी रंगमंच का संचालन प्रशासनिक अधिकारी के निदेश एवं सहयोग से किया जाता है। हिन्दी रंगमंच पर सांस्कृतिक कार्यों का आयोजन किया जाता है। उक्त अवसर पर वाह्य बुद्धिजीवी व्यक्तियों को भी सादर आमंत्रित किया जाता है तथा उनसे हिन्दी संबंधी प्रचार-प्रसार हेतु दिशा-निदेश प्राप्त किया जाता है।

प्रशासन कार्यालय के विभिन्न क्रिया-कलापों में विशेष अभिरूचि लेता है। प्रशासन जितनी तत्परता से कार्य सम्पादन के लिए उत्सुक रहता है, उतना ही अधिकारियों/कर्मचारियों की सुख-सुविधा का भी ध्यान रखता है। अतः प्रशासन प्रशासनिक कार्यों के लिए एक मजबूत कड़ी का काम करता है।

...

दर्शन विश्वास है, परन्तु अनुभव नग्न सत्य है।

पेट्रिकहेनरी

अनजान होना इतनी लज्जा की बात नहीं जितना सीखने के लिए तैयार न होना।

फ्रेंकलिन

इंसानों का अभ्यारण

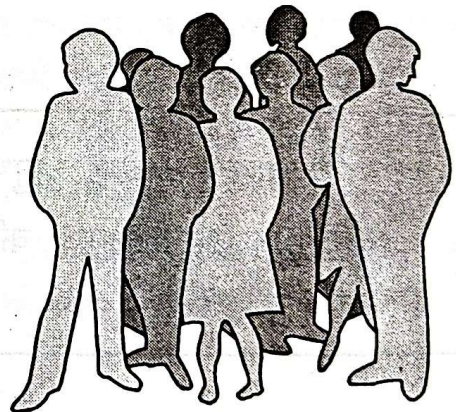
श्री पीयूष ओझा

वरिष्ठ लेखाकार

परिचर्चा चली
गोष्ठी हुई, विषय था "पर्यावरण"
एक ने कहा, घट गया है 'ओजोन' का "आवरण"
दूसरे ने कहा बढ़ रहे हैं मरुस्थल-व-रण
किसी ने आलाप लगाया और बढ़ाओ अभ्यारण ।
कोई बोला, पेड़ उगाओ,
पशु-पक्षी बढ़ाओ,
लुप्त होती नस्लें बचाओ ।

'जलपान' हुआ, कुछ बात बनी,
'भोजन' के पश्चात् एक राय बनी,
कई योजनाएँ उस दिन बनीं,
'करोड़ों' का बजट पारित हुआ ।

सब खुश थे अब देश में पशु-पक्षी बच पायेंगे ।
'जंगलों' में अब पेड़-पौधे भी दीख जायेंगे ।
तभी सभा-कक्ष के एक कोने में तड़पती इंसानियत रो पड़ी ।
मुझे भी बचाले ऐ इंसान, वह बोल पड़ी,
इंसानों का भी 'अभ्यारण' बना दे
जहाँ मेरी भी नस्ल 'विचरण' करे ।





ओरछा की सैर

श्री अनिरुद्ध राय
व० ले०

बेतवा नदी के किनारे पर बसी ओरछा नगरी में एक ऐसा रामलला का मंदिर है जिसके विषय में किंवदन्ती है कि भगवान राम वहाँ दिन में निवास करते हैं तथा रात में वे अयोध्या चले जाते हैं ।

ओरछा नगरी विशाल मध्य प्रदेश राज्य के एक कोने पर बसे शक्तिशाली, बहादुर बुन्देलखण्ड के राजपूत राजाओं की राजधानी थी ।

यहाँ पर 1554-1592 तक मधुकर शाह का शासन था । उनकी रानी का नाम गणेश कुंवर था । गणेश कुंवर एक सुन्दर, सुशील, धार्मिक प्रवृत्ति की रानी थीं । वे भगवान राम लला की अनन्य पुजारिन थीं ।

मधुकर शाह कृष्ण भक्त थे तथा वे एक बार वृन्दावन की यात्रा पर जाना चाहते थे । उन्होंने रानी गणेश कुंवर को भी साथ चलने को कहा । रानी गणेश कुंवर ने अपने इष्ट देव की पूजा के लिए अयोध्या जाने की इच्छा प्रकट की । राजा इस पर कुपित हो गए तथा उन्होंने रानी को कहा कि आप जब वहाँ से आएँ तो भगवान राम को भी साथ लेते आवें, अन्यथा न आवें । गणेश कुंवर अकेले अयोध्या चली गई । वहाँ रानी ने राम लला की विधिवत तथा भक्ति पूर्वक पूजा-अर्चना की जो बहुत दिनों तक चली । रानी गणेश कुंवर की भक्ति-भावना तथा पूजा से प्रसन्न होकर भगवान राम प्रगट हुए । रानी ने उनसे ओरछा चल कर रहने का आग्रह किया । रानी की भक्ति भावना से प्रसन्न होकर भगवान ने ओरछा जाना स्वीकार कर लिया, परन्तु भगवान राम

ने रानी गणेश कुंवर के सामने एक शर्त रखी। रानी भगवान की मूर्ति को एक बार जहाँ रख देंगी, वह मूर्ति वहीं पर स्थापित हो जाएगी।

रानी ने भगवान की शर्त मंजूर की तथा वह रामलला की मूर्ति लेकर अयोध्या से खुशी-खुशी ओरछा आई। महाराजा मधुकर शाह ने रानी और अपने लिए एक महल बनवाया था।

रानी गणेश कुंवर भगवान की मूर्ति लेकर ओरछा आई तथा अपने महल गई। उन्होंने वह मूर्ति अपने महल में रखी। इसी महल के बगल में एक सुन्दर, ऊँची चट्टान पर विशाल मंदिर का निर्माण किया गया था। सोचा गया था कि उसमें भगवान रामलला की मूर्ति को स्थापित किया जाएगा। लेकिन जब महल से मूर्ति को वहाँ ले जाने की तैयारी हुई तो वह मूर्ति फिर नहीं उठ पाई, क्योंकि भगवान की शर्त के अनुसार वह महल में ही स्थापित हो गई थी और इस प्रकार वह महल मंदिर बन गया, जिसे आज भी देखा जा सकता है। इसमें महल का रूप है परन्तु आँगन में जाने पर रामलला की तथा अन्य देवी देवताओं की मूर्तियाँ स्थापित हैं।

कहते हैं कि भगवान राम दिन में ओरछा निवास करते हैं तथा रात में अयोध्या चले जाते हैं।

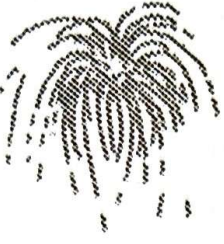
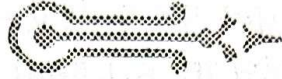
आप बगल में बहती बेतवा नदी की शीतल जलधारा में स्नान कर, पवित्र होकर भगवान के मंदिर में दर्शन एवं पूजा कर सकते हैं। मंदिर के सामने स्थित फल, पुष्प, प्रसाद तथा ऐतिहासिक काल की कलाकृतियों की दुकानें भी हैं। साथ ही भोजन-नास्ता के लिए तथा रात्रि विश्राम के लिए होटल भी है।

ओरछा जाने के लिए रेल मार्ग द्वारा झाँसी जाकर वहाँ से ओरछा जाया जा सकता है।

●●●

नई शताब्दी

श्री रमा प्रसाद चक्रवर्ती
आशुलिपिक

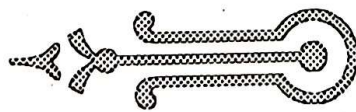


देखो देखो नयी शताब्दी आयी है,
सबके जीवन में हर्ष-उल्लास लायी है ।
शताब्दी का पहला वर्ष हो प्यारा,
प्रभु का आशीष अद्भुत न्यारा ।

भुलाकर सब अपने गिले शिकवे को,
आओ करें हम सब स्वागत नयी शताब्दी का ।
भुलाकर सब हिंसा और भेदों को
बाँट लें हम परमेश्वर के उस महान प्रेम को ।



याद रखें हम सदा-सर्वदा
उस महान परमेश्वर को
जिसने रची यह सृष्टि, तुम और हमको
कर सकें समर्पण उसे अपने तन और मन को
आओ करें हम उसकी स्तुति
उसकी करुणा अपरम्पार
वही है जग में सर्वशक्तिमान
लेकर चलें हम परमेश्वर का नाम ।



खेल

श्री मनमीत कुमार

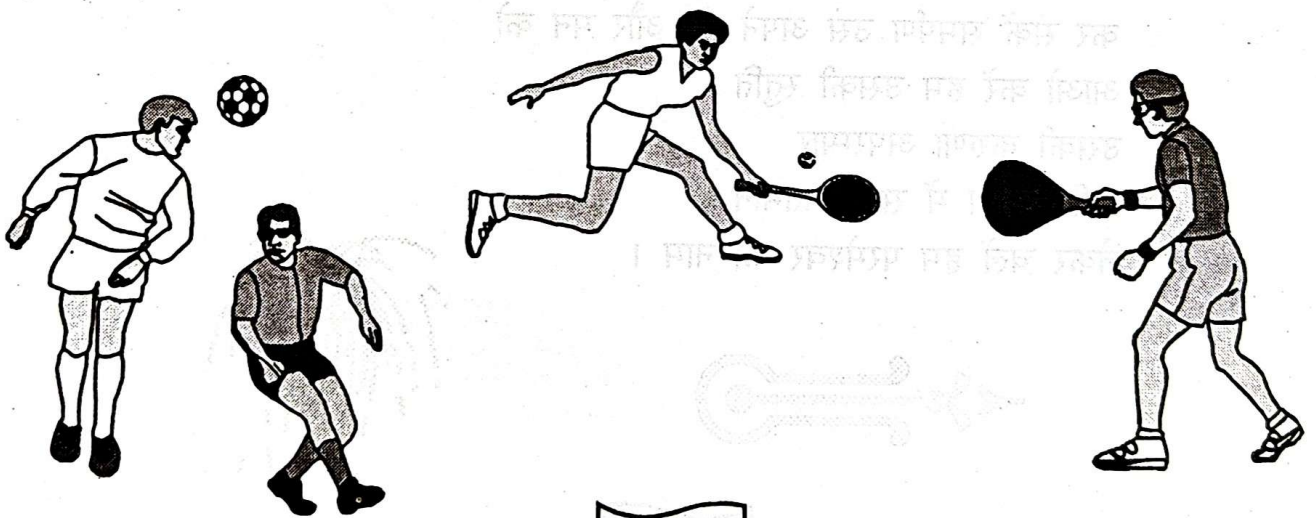
स० ले० अधि०



ऑफिस से मैं जैसे ही घर पहुँचा कि मेरी बेटी, जो कि अभी प्ले क्लास में है, जिद करने लगी कि पापा मुझे विडियोगेम खरीद दीजिए। कुछ पल के लिए मैं सोच में पड़ गया और गहन विचार करने लगा कि 21वीं सदी में हम कहाँ पहुँच गये हैं। हमारी संस्कृति, हमारा इतिहास कहीं खो तो नहीं रहा है। हमारे बच्चे पारम्परिक खेल को कहीं भूल तो नहीं गये हैं? मेरा दिल मर्माहत हो उठा।

आये दिन जब हम कहीं भी किसी रास्ते से गुजरते हैं तो विडियोगेम की दुकान पर बच्चों की अच्छी खासी भीड़ देख सकते हैं। एक दिन मैं एक रास्ते से गुजर रहा था, तो देखा कि दो बच्चे मोबाइल फोन का 'खेल' खेल रहे थे। आजकल तो इंटरनेट तथा आधुनिक किस्म के बहुत से खेल बाजार में सहज उपलब्ध हैं। उपर्युक्त सभी खेलों में मानसिक परिश्रम ज्यादा तथा शारीरिक परिश्रम कम है। बच्चों की आँखों पर बढ़ते हुए चशमों की संख्या आराम से देखी जा सकती है। एक तो बच्चे ऐसे ही पढ़ाई के बोझ से लदे हुए हैं और उस बढ़ते हुए इलेक्ट्रॉनिक गेम ने उन्हें ओर भी बोझिल बना दिया है। वे अपनी उम्र से ज्यादा बड़े नजर आने लगते हैं। मुझे लगता है कि शायद आने वाले कुछ वर्षों में परम्परागत छोटे-छोटे खेलों को वे लगभग भूल ही जायेंगे। माता-पिता की बढ़ती हुई अपेक्षाएँ उनके कोमल हृदय को घिसती चली जा रही हैं।

मेरी सोच धीरे-धीरे मुझे धकेलती हुई मेरे बचपन में ले गई। जब हमलोग नंगे पाँव साईकिल के पीछे भागते थे। मेरे भैया कंचा (गोली) खेल-खेल कर कंचा जमा किया करते थे



ओर मैं बड़े तन-मन से सम्भाल कर रखता था। धूल में पूरी तरह नहा कर जब मैं घर वापस लौटता था, तो माँ की डाँट मुझे खानी पड़ती थी। पिट्टो, बुढ़िया कबड्डी, कबड्डी आदि का खेल काफी लोकप्रिय था। लड़कियों में कित-कित का खेल, गोटी का खेल मशहूर था।

लेकिन बदलते समय के अनुसार खेल भी बदलते चले गये। स्वाभाविक खेलों का स्थान कृत्रिम खेलों ने लेना शुरू कर दिया है। जिस प्रकार बहुत से जीव पृथ्वी से हमेशा के लिए लुप्त हो गये, उसी प्रकार ऐसा लगता है कि हमारे छोटे-छोटे खेल भी धीरे-धीरे लुप्त होते जा रहे हैं। मुझे अच्छी तरह याद है कि बचपन में आकाश में उड़ते पतंगों को बड़े प्यार से देखा करता था तथा काफी आनन्दित होता था। लट्टू नचाने के खेल में दोस्तों के साथ कभी-कभी हाथापाई की नौबत भी आ जाती थी। पतंग के धागे को मंजा करने के लिए बहुत से उपायों पर विचार किया जाता था। लेकिन आजकल जब मेरी नजर आकाश की ओर उठती है तो शून्य के अलावा कुछ नहीं दिखता है। सड़कों के किनारे, मैदानों में क्रिकेट के बैट-बॉल नजर आते हैं। परन्तु, लट्टू से खेलते हुए, कबड्डी खेलते हुए, पतंग उड़ाते बच्चे बहुत ही कम नजर आते हैं। जब बच्चे धूल से खेलते हैं तो बड़ों की नजर में इसे अपराध माना जाता है।

बच्चों का मन स्वच्छ जल की तरह होता है, जो खुले आकाश, हरी-भरी धरती के बीच रहना चाहता है, लेकिन आज यह सिर्फ सपनों की बात रह गई है। मुझे याद है कि बचपन में श्री जैनेन्द्र की कहानी 'खेल' पढ़ी थी। जिसमें एक लड़का (मनोहर) नदी के पानी में डंडा मारकर पानी के उछाल का आनन्द ले रहा था तथा एक छोटी लड़की (सुरबाला) बालू में पैर से घरौंदा बना रही थी। मनोहर अंत में पानी के खेल को छोड़ सुरबाला के पास आया और उसके बालू के घरौंदों को पैर से तोड़ दिया। सुरबाला रो पड़ी। मनोहर घबड़ा कर अपने पैर से बालू का घरौंदा बनाने लगा। अंत में दोनों खिल-खिलाकर हँस रहे थे। सूर्य की डूबती किरण भी उनकी खिलखिलाहट का आनन्द ले रही थी।

ऐसा क्यों हो रहा है ? क्या आज की अभिभावक पीढ़ी इसके लिए जिम्मेवार है या फिर हमारी शिक्षा पद्धति जो बच्चों की मासूमियत को निगलने पर तुली हुई है ? हमारी बढ़ती हुई अपेक्षाएं भी इसके लिए जिम्मेवार हैं। बच्चों की स्वच्छ मुस्कान को बरकरार रखना हमारी जिम्मेवारी है। हमारी पूरी सोच पर फिर से सोच की आवश्यकता है।

...

अंतहीन दौड़



श्री राम प्रताप सिंह 'मधुप'
वरिष्ठ लेखाकार



सहते हुए,
सदियों-सदियों अनन्त वेदना
अनथक-अनवरत
मानवीय प्रयासों से
निर्मित और विकसित हुई
सामाजिक संरचना ।
जीवन के लक्ष्य और
मूल्य हुए निर्धारित,
ईश्वर नियन्ता बना ।

राजा उसका प्रकट रूप,
प्रकृति ने सौंप दिये
अपने सब अक्षय श्रोत,
जिनका विदोहन कर
प्राणियों में मनुष्य हुआ
सर्वश्रेष्ठ ।

हर युग में आते रहे
एक पर एक युग पुरुष
दिखाते रहे रास्ते ।
रास्तों पर बढ़ते रहे,
संस्कृति के प्रगति रथ ।
इस तरह चलते चलते,
बीत चली बीसवीं सदी
राशि-राशि प्रश्न छोड़,

प्रश्नाकुल, आज का विकल मनुष्य
डिस्को प्रकाश एवं ध्वनियों से बना अंधा और बेहरा ।

दौड़ रहा तेज-तेज
जिसका न अन्त कोई
भले इस मुकाम पर
कविता मेरी खत्म हुई ।

योगम् शरणं गच्छामि

श्री ओम प्रकाश
अनुभाग अधिकारी

आज के मानव ने तरह-तरह के प्रयोग किये हैं हाँलाकि विज्ञान ने काफी उन्नति की है, किन्तु कोई भी प्रयोग, कोई भी उपाय इस भाग-दौड़ के जीवन में शांति स्थापित करने में सहायक सिद्ध नहीं हुआ है। यही कारण है कि आज पुनः हजारों वर्षों के बाद हम योग के विषय में विचार करने के लिए विवश हो गये हैं। यह हमारे लिए बहुत ही दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति है कि आज जिस योग की चर्चा हो रही है वह हजारों वर्ष पूर्व हमारी संस्कृति का भाग रहा है। योग की ही परम्परा में हमारा समाज पुष्पित एवं पल्लवित होता रहा था। हम यदि वैदिक संस्कृति पर ही एक दृष्टि डालें तो समझ पायेंगे कि जब बच्चे छः सात वर्ष की आयु को प्राप्त होते थे तो उनके माता-पिता उन्हें गुरु के पास ब्रह्मचर्य जीवन व्यतीत करने हेतु समर्पित कर देते थे जहाँ शिष्य गुरु के अनुशासन में शिक्षा-दीक्षा प्राप्त करते थे। 'ब्रह्म' और 'चर्य' शब्दों के मेल से बना है ब्रह्मचर्य और इसका अर्थ होता है उच्च चेतना (ब्रह्म) में विचरण (चर्य) करना। गुरु अपने शिष्यों को आसन, ध्यान, प्राणायाम एवं अन्य यौगिक क्रियाओं से उनके ध्यान को एकाग्र करने एवं जीवन को अनुशासित करने की शिक्षा प्रदान करते थे। इस बात को तो आज का विज्ञान भी स्वीकार करता है कि हमारे शरीर की दो महत्वपूर्ण ग्रंथियाँ-पीनियल एवं पिट्यूटरी से होने वाले हार्मोन का स्त्राव हमारे शरीर एवं मन को प्रभावित करता है। यदि बचपन से ही योगासनों द्वारा इनके स्त्रावों को नियंत्रित किया जाय तो हम शारीरिक, मानसिक एवं भावनात्मक रूप से काफी सशक्त एवं कार्यों को दक्षता पूर्वक कर सकने में सक्षम होंगे। ब्रह्मचर्य जीवन व्यतीत कर चुके बच्चे जब गृहस्थ जीवन में प्रवेश करते थे तो वे शारीरिक, मानसिक एवं भावनात्मक रूप से पूर्ण स्वस्थ होते थे और इसका प्रमाण इतिहास के पन्नों में भीष्म, अर्जुन, कर्ण द्रोण इत्यादि महापुरुषों के रूप में दर्ज है।

इस देश की सभ्यता खासकर वैदिक सभ्यता गाँवों की सभ्यता रही है। लोग गाँवों में निवास करते थे। उनकी आवश्यकता गाँवों तक ही सीमित थी। मुख्य समस्या भोजन, वस्त्र, आवास की ही थी। किन्तु जैसे-जैसे ज्ञान का विकास होता गया, ज्ञान ने विज्ञान का रूप लिया,

औद्योगिक क्रान्तियाँ हुई, समाज का ढाँचा बदलता गया तथा जीवन की गति अत्यंत ही तीव्र हो गई। विश्व काफी सिमट गया तथा संसार के एक कोने में बैठा आदमी संसार के दूसरे कोने में घटित घटना से प्रभावित होने लगा। समस्याएँ बढ़ीं, उनके समाधान भी हुए, किन्तु सब कुछ होते हुए भी मानव शांति के लिए भटकता ही रहा है।

पाश्चात्य समाज पिछली दो-तीन शताब्दियों से केवल मानव के वाह्य विकास में ही लगा रहा है। इस क्षेत्र में महत्वपूर्ण सफलताएँ उन्हें मिलीं। शल्य चिकित्सा के क्षेत्र में तो क्रांति ही आ गई। असाध्य रोगों के उपचार संभव हो सके, किन्तु समस्या का मूल रूप में निदान नहीं हो सका। आधुनिक औषधि विज्ञान केवल उसके वाह्य कारणों का निदान कर सकता है, शरीर में उत्पन्न होने वाली बिमारियों को उपचार कर दबा सकता है, किन्तु बिमारियाँ नहीं हों इसे रोकने में सफल नहीं हो सका। कई ऐसी बिमारियाँ हैं जिनका उपचार आधुनिक औषधि विज्ञान के पास नहीं है, क्योंकि इस विज्ञान अपना ध्यान सिर्फ मानव शरीर तक ही केंद्रित कर रखा है जबकि हमारे मन की अवस्था का प्रभाव व्यापक रूप से शरीर पर पड़ता है। विभिन्न चिन्ताओं से ग्रसित होकर जब हम 'मनोविकार' से आक्रांत हो जाते हैं तो यह विभिन्न बिमारियों के रूप में शरीर में प्रगट होता है और यह तो विज्ञान सम्मत मत है कि पूरी शारीरिक क्रियाओं का नियंत्रण मस्तिष्क से होता है जैसे कि भोजन का पचना, स्वसन आदि। यदि मस्तिष्क ठीक ढंग से कार्य नहीं करे तो भोजन को पचाने के लिए पाचक ग्रंथियों से जो स्राव उत्पन्न होता है, नहीं हो सकेगा और अपच हाईपर एसिडिटी जैसी बिमारी हो जाएगी। यदि मन शांत नहीं हो तो मस्तिष्क ठीक से कार्य संपादित नहीं कर सकेगा। मन को नियंत्रित करने का उपाय इस आधुनिक विज्ञान के पास नहीं है। आज इन परंपराओं से सम्पर्क भंग हो गया है जो मानव के आंतरिक व्यक्तित्व को विकसित करती है। अब एक बार पुनः यह आवश्यक हो गया है कि उन परंपराओं से संपर्क स्थापित किया जाय और मानव के आंतरिक विकास पर ध्यान दिया जाय। हम लोगों में से अधिकांश लोगों ने अपने जीवन में किसी न किसी समय मानसिक व्याधियों का अनुभव किया है। आज की मानवता मानसिक तनाव, अनिद्रा एवं विभिन्न मानसिक रोगों से ग्रसित है। अनिद्रा का उपचार औषधियों से नहीं हो सकता। औषधियों तथा विटामिनो के प्रयोग से शरीर में प्राणशक्ति नहीं बढ़ सकती। पश्चिमी देशों में लाखों लोग वात व्याधि से पीड़ित हैं। हजारों-हजार लोग माइग्रेन से पीड़ित हैं। डॉक्टरों के पास इन व्याधियों के लिए जितने भी इलाज थे ये सभी आजमाकर देख लिए गये किन्तु समाधान नहीं हो सका। अब पाश्चात्य देशों में ध्यान इस ओर गया है तथा मन एवं प्राणशक्ति पर शोध हो रहे हैं। जिन रोगों का उपचार औषधि विज्ञान के पास नहीं है, डॉक्टरों के पास नहीं है, उनका इलाज योग के सरल अभ्यासों से संभव दीखता है। यही कारण है कि आधुनिक मानव ने योग के विषय में सोचना प्रारंभ कर दिया है। शताब्दियों पहले जो कुछ नष्ट-भ्रष्ट हो गया था

उसे अब योग के माध्यम से खोजा जा रहा है। योग में श्वास को शरीर और मन के बीच की कड़ी माना गया है। प्राणायाम की कई क्रियायें हैं जिसके द्वारा श्वास को नियमित एवं नियंत्रित किया जा सकता है। इस श्वास रूपी प्राणशक्ति को एकत्रित कर शरीर के उस भाग में भेजा जा सकता है जहाँ दोष होता है तथा उसे ठीक किया जाता है। वर्तमान समय में योग उस वट वृक्ष के समान सभी को आश्रय प्रदान करता है जिसकी छाँया में दिन में पथिक विश्राम करता है, पंचायत की बैठक होती है तथा समस्याओं का हल निकाला जाता है तथा रात्रि के अंधेरे में चोर चोरी के माल का भी बंटवारा करते हैं। ठीक इसी प्रकार योग क्या अमीर क्या गरीब, साधु-सन्यासी, गृहस्थ, रोगी एवं भोगी सभी को बिना भेद भाव के आश्रय प्रदान करता है। योग शरणं गच्छामि। योगं शरणं गच्छामः।

॥ हरि ऊँ ॥

उम्र ढल जाने के बाद आदमी लेट भी नहीं सकता। साधना रही दूर। यदि तुम योगाभ्यास चौथेपन के लिए रिजर्व रखोगे तो समझ लो कभी भी नहीं कर पाओगे। योगाभ्यास की आयु है युवावस्था। बुढ़ापा तो कल्पने के लिए है। युवावस्था में योगाभ्यास जीवन के आनंद को बढ़ाता है। अन्यथा मनुष्य जल्दी ही भोगों की मार से कराह उठता है।

— परमहंस स्वामी सत्यानंद

मानसिक रूप से ईमानदार बनें

श्री चन्दन कुमार
लेखाकार

एक पंडित जी थे। उनका एक शिष्य था। दोनों एक साथ छोटी-सी कुटिया में रहा करते थे। पंडित जी आस-पास के गाँव में घूम-घूमकर भिक्षा इकट्ठा किया करते थे। उनका शिष्य रसोई बना दिया करता था। शिष्य रोज रसोई बनाते-बनाते ऊब-सा गया था। वह मन-ही-मन सोचा करता कि यदि आज पंडित जी को भिक्षा न मिले तो बहुत अच्छा हो, ताकि रसोई बनाने के काम से मुझे छुट्टी मिले और मैं चैन से सोऊँ।

एक दिन सचमुच ऐसा ही हुआ। पंडित जी बिना भिक्षा इकट्ठा किये ही वापस आ गये, क्योंकि एक व्यक्ति ने पंडित जी को भरपेट भोजन करा दिया था। इनके मन में भी ठीक शिष्य वाली बात याद आयी। पंडित जी को खाली हाथ आता देखकर शिष्य बहुत प्रसन्न हुआ। परन्तु यह प्रसन्नता कुछ समय तक के लिए ही रही। पुनः भूख लगने पर उसने अनुभव किया कि पंडित जी को भिक्षा न मिलने का क्या कारण हो सकता है।

ठीक इसी तरह यदि हम सोचते रहे कि हमारे कार्यालय में कम काम हो और हम हाथ पर हाथ रखकर बैठे रहे तो यहाँ पंडित जी एवं शिष्य वाली कहानी चरितार्थ होती है। हम हमेशा यह भूल जाते हैं कि काम पर्याप्त न होने पर हमारी आवश्यकता विचारणीय बन जायेगी।

हम किसी भी संस्थान में काम करें हमें सदैव यह सोचना चाहिए कि मात्र एक कर्मचारी होने के अलावा भी हमारा कुछ दायित्व है। वह दायित्व है अपनी संस्था के प्रति ईमानदार होना। अपने कार्य को पूरी निष्ठा के साथ करना तथा पारिश्रमिक देने वालों का हित चिन्तन करना मानसिक ईमानदारी है।

अनुभव यह बताता है कि रुपये-पैसे के मामले में ईमानदार व्यक्ति आसानी से मिल जाते हैं। लेकिन मानसिक ईमानदारी वाले लोग बहुत ही दुर्लभ रहते हैं। मानसिक ईमानदारी का धनी व्यक्ति एक-एक पैसे का हिसाब तो रखता ही है साथ ही साथ समय के हर पल का सदुपयोग करना भी जानता है। इसके अभाव में हम मन लगाकर काम करने के बजाए घड़ी की सुई को हर पल देखते रहते हैं। फलतः अपनी प्रतिभा को ठेस पहुँचाते हैं तथा उसे उभरकर प्रकट

ही नहीं होने देते । उधर संस्थान (प्र०) को कार्य करने का ढंग पसन्द नहीं आता इधर हम विरोध का वातावरण निर्माण करते रहते हैं ।

मनुष्य मशीन की भाँति कोई वस्तु नहीं है जो उसकी सेवा को सोना या चाँदी के टुकड़ों में नापा या तौला जाय जो लोग यह समझते हैं कि वेतन या पारिश्रमिक के रूप में उन्हें अपने द्वारा की गई सेवा का मूल्य प्राप्त होता है वे अपने आपको किसी जड़ वस्तु की तरह बेचते हैं तथा सेवा शब्द को कलंकित करते हैं इसी प्रकार यदि संस्थान यह समझता है कि हम अपने कर्मचारियों द्वारा की गई सेवा का मूल्य निर्धारित धन राशि देकर चुका देते हैं तो यहाँ भी उपर्युक्त बात ही स्पष्ट होती है । ऐसी संस्था एवं कर्मचारी दोनों स्वयं ही बिक जाने की मानसिकता रखते हैं या उसी में लिप्त होकर जीवित रहते हैं ।

हमारी संस्था ने कहीं सेवा के वास्तविक महत्व को भुला तो नहीं दिया है । इसमें व्याप्त असंतोष, धोखाधड़ी देखकर ऐसा नहीं लगता कि इसके मूलरूप से पंडित जी और शिष्य वाली कहानी तो नहीं दोहराई जा रही है ।

हमारी उदीयमान संस्था के कर्मचारीगण सेवा के वास्तविक अर्थ को पहचानें तथा अच्छी तरह समझकर वैसे जीवन में प्रवेश करें जहाँ सेवा का अर्थ अपने आप को बेचना नहीं वरन् मानसिक ईमानदारी के साथ अपने को उपयोगी बनाना है ।

...

ईमानदार वैभव का मुँह नहीं देखती, वह तो मेहनत के पालने पर किलकारियाँ मारती है और सन्तोष पिता की तरह उसे देखकर तृप्त हुआ करता है ।

- रांगेय राघव

हर मुश्किल आसान

श्री बंशीधर मिश्र
सहायक लेखा अधिकारी

हर मुश्किल आसान है भईया
हर मुश्किल आसान ।
दुःख का जीवन
सुख का जीवन
जीवन है पल-पल का
मुश्किल की राहों पर चलना
जीवन का है गहना
तोड़ के संकट की बेड़ी को
जीवन पथ पर बढ़ जाना अरमान ।
हर मुश्किल आसान है भईया
हर मुश्किल आसान ।

भूल न जाना मंजिल अपनी
मिल जायेंगे बैरी लाख ।
जीवन के इस बंजर पथ को
बना लोगे बिल्कुल आसान ।
हौसला हो 'गर पास तुम्हारे
नहीं कोई संकट है पास ।
हर मुश्किल आसान है भईया
हर मुश्किल आसान ।

चिन्ता यही है

श्री चन्द्रिका सिंह, लेखाकार

सोना था पीछे, सोते अभी हो,
जबकि सोना, सोना नहीं है ।
लुटाना था पीछे, लुटाते अभी हो
जबकि तुम्हारा, कमाया नहीं है ।
पहले कमाओ पीछे लुटाओ,
तुम्हारे जैसा, सयाना नहीं है ।
जलाना था पीछे, जलाते अभी हो,
जबकि जलाना, बिल्कुल सही है ।
चिन्ता पे जलता, तो चिन्ता न होती,
जिन्दा हूँ जलता, चिन्ता यही है ।

प्यारे वतन

सुजित कुमार
सुपुत्र श्री चन्द्रमोहन कुमार
(व० लेखाकार)

तुम हो मेरी जान !
तुम ही मेरा ईमान !!
तेरे ऊपर कुर्बान मेरी जान !
ऐ मेरे प्यारे वतन हिन्दुस्तान !!

न हिन्दू, न मुसलमान !
न कोई यहाँ बेईमान !!
यही है हमारे भारत की पहचान !
तेरी शान की खातिर
है कुर्बान मेरी जान !

प्रजातंत्र का कमाल

श्री राम सुभग राम
व० ले०

सैकड़ों वर्षों से गुलाम भारत को आजाद कराने के लिए हमारे पूर्वजों ने क्या नहीं किया। अपने धन-दौलत के साथ-साथ अपने प्राणों की कुर्बानी दी। इसका ज्वलन्त उदाहरण महात्मा गाँधी के अहिंसात्मक आन्दोलन, पंडित जवाहर लाल नेहरू, उनके पिता पंडित मोतीलाल नेहरू, सरदार वल्लभ भाई पटेल, नेताजी सुभाष चन्द्र बोस, वीर भगत सिंह इत्यादि नेताओं का जन जागरण आन्दोलन, जलियाँवाला काण्ड, किससे छिपा है। हमारे पूर्वजों ने अनेक कुर्बानियाँ देकर भारत माँ की बेडियाँ तोड़ीं और भारत को आजादी दिलाई।

आजादी मिलने पर अपना संविधान बना। हिन्दी को राजभाषा बनाया गया ताकि भारत को एकता के सूत्र में बाँधा जा सके। चूँकि भारत अनेक राज्यों एवं अनेक भाषाओं का देश है, इसलिए पूरे राष्ट्र के लिए एक भाषा अपनाकर हम कह सकें कि हम भारतीय हैं।

लेकिन पहले के नेताओं में थोड़ी कमी रह गई थी, जिसकी भरपाई आज के नेता कर रहे हैं। पहले के नेता राष्ट्र को अपना समझते थे, पर आज के नेता घर परिवार को राष्ट्र समझते हैं। पहले लोग धन को धर्म नहीं मानते थे, पर आज के नेता "धन ही धर्म है" के सिद्धान्त को मानते हैं। राष्ट्र आज के नेताओं के लिए गौण माना जाता है। पहले के नेता प्रजातंत्र सरकार का अर्थ जनता की सरकार, जनता के लिए सरकार एवं जनता द्वारा निर्मित सरकार मानते थे, पर आज के नेता ने प्रजातंत्र का अर्थ ही बदल दिया है। उनके मतानुसार प्रजातंत्र जनता विहीन, जनता से दूर एवं जनता से खरीदी हुई सरकार है, ऐसे युग परिवर्तन के साथ-साथ, विचार परिवर्तन भी आवश्यक प्रतीत होता है। आज के नेतागण, पहले के नेताओं से महान अवश्य नजर आते हैं। आज के नेता आजादी का पूरा-पूरा लाभ उठाना अच्छी तरह जानते हैं। पहले के लोग अपने प्राण एवं धन गवाँ कर उज्ज्वल भारत को देखना पसंद करते थे, पर आज के नेता ऐसी गलती करना पसन्द नहीं करते हैं। आज लोग अपने घर परिवार का उज्ज्वल भविष्य देखना ही अपना पावन

कर्तव्य मानते हैं, चाहे उसके लिए जनता के धन एवं प्राण ही लेना क्यों न पड़े ।

यह प्रजातंत्र का कमाल है कि यहाँ आदमी तो क्या, पशु-पक्षियों को भी चरने, विचरने एवं खुली हवा में साँस लेने का पूरा-पूरा अधिकार है । यह प्रजातंत्र ही है कि कोई व्यक्ति कुछ भी बोल सकता है, कहीं भी घूम सकता है । पटना शहर को ही उदाहरण मान कर देखें, जहाँ भैंस, सुअर आदि पशुओं को इच्छानुसार घूमने विचरने, शौच करने का पूरा हक है । प्रजातंत्र में कोई कुछ भी बोल सकता है । किसी को गद्दार, देशद्रोही, चरित्रहीन, विघटनकारी कहने का पूरा हक है ।

प्रजातंत्र का ही कमाल है कि कोई व्यक्ति स्वार्थी, लोभी, अवसरवादी बन सकता है । किसी को टांग अड़ाने का अधिकार प्रजातंत्र में नहीं है । सामाजिक दुराचार और आर्थिक भ्रष्टाचार करने की छूट प्रजातंत्र में ही है । कोई भी हत्यारा राजनीति में समा सकता है । कोई भी नेता अपने बेटा को पूरा पावर दे सकता है । जैसे गन पावर, मनी पावर आदि आदि । नेता के बेटा जो चाहे, सो कर दे, मगर सबूत नष्ट कर दे । न बचेगा सबूत और न फँसेगा सपूत । है न प्रजातंत्र का कमाल ? कितना दूँ इसकी मिसाल ।

मैं समझता हूँ कि आप भी मेरे विचार से अवश्य सहमत होंगे ।

...

प्रजातंत्र का अर्थ मैं यह समझता हूँ कि इसमें नीचे से नीचे और ऊँचे से ऊँचे आदमी को आगे बढ़ने का समान अवसर मिले ।

- महात्मा गाँधी

संयुक्त राष्ट्र संघ का मानवाधिकार और विश्व-शांति के क्षेत्र में योगदान



सौरभ निरुपम

संत जेवियर हाई स्कूल, पटना

सुपुत्र श्री विजय कुमार सिन्हा, क०स०

प्रथम विश्वयुद्ध के विनाशकारी प्रभाव के बाद लीग ऑफ नेशन्स की स्थापना इस आशा और आकांक्षा के साथ हुई थी कि विश्व-शांति को स्थायी रूप देने में यह विश्व-संस्था अहम भूमिका प्रदान करेगी। परंतु 1939 ई० में पुनः द्वितीय विश्व-युद्ध शुरू हो जाने के कारण जीवन और संपत्ति का बड़े पैमाने पर विनाश हुआ। युद्ध-विभीषिका की इस त्रासदी ने विश्व-समुदाय के पुनः एक ऐसे विश्व-संगठन की आवश्यकता को जन्म दिया जो विश्व-शांति को स्थायी भाव प्रदान कर सके। परिणामस्वरूप संयुक्त राष्ट्र संघ (UNITED NATIONS ORGANISATION) की स्थापना हुई। यह विश्वसंस्था अपने अस्तित्व में अधिकारिक रूप से 24 अक्टूबर, 1945 ई० को आई। संयुक्त राष्ट्र संघ अथवा यू०एन०ओ० के प्रमुख उद्देश्यों में प्रमुख हैं :-

- (1) अंतर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा बनाए रखना,
- (2) राष्ट्रों के मध्य समान अधिकार व स्वशासन के सिद्धांत के प्रति सद्भावना पर आधारित, मैत्रीपूर्ण संबंधों का विकास करना।
- (3) अंतर्राष्ट्रीय, आर्थिक, सांस्कृतिक और मानवीय समस्याओं के समाधान हेतु राष्ट्रों में सहयोग बढ़ाना तथा जाति, लिंग, क्षेत्र, भाषा और धर्म के भेदभाव के बिना, मानव अधिकारों और मूलभूत स्वतंत्रताओं के प्रति आदर-भावना को विकसित करना और
- (4) इन सब उद्देश्यों के प्राप्ति के लिए एक समन्वय केन्द्र बनाना।

संयुक्त राष्ट्र ने विश्व को कई ऐसी विषम परिस्थितियों से उबारा है जब निश्चित रूप से तृतीय विश्व-युद्ध की संभावनाएँ बलवती होने लगी थीं। मानवाधिकारों की रक्षा के निमित्त संयुक्त राष्ट्र संघ के अंतर्गत, “ संयुक्त राष्ट्र बाल कोष, संयुक्त राष्ट्र शरणार्थी (यू०एन०एच०सी० आर०),

संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (यू०एन०डी०पी०), डिपार्टमेंट ह्यूमैनिटैरियन अफेयर्स (डी०एच०ए०) यूनाइटेड नेशनल इंस्टीच्यूट फॉर डिसआर्मामेंट रिसर्च (यू०एन०आई०एस०आई०आर०) आदि जैसी संस्थाएँ प्रमुख हैं।

संयुक्त राष्ट्र बाल कोष, जिसे यूनीसेफ भी कहते हैं, संयुक्त राष्ट्र की आमसभा द्वारा "दिसंबर 1946 ई० को विश्व-युद्ध के दौरान तबाह हुए अनाथ व बेसहारा बच्चों की मदद के लिए स्थापित किया गया। 1950 ई० से, जब से उसने यूरोपीय बच्चों की मदद के लिए अपने आपातकालीन कार्यक्रम को समाप्त किया है, तबसे यह यूरोप के बाहर अन्य विकासशील देशों को अपनी सेवाएँ प्रदान करता आ रहा है। बच्चों के अधिकारों पर इसका सर्वाधिक महत्वपूर्ण लेख "कन्वेंशन" है जो सभी बच्चों के स्वस्थ, स्वतंत्र और उत्पादक जीवन के अधिकार को सुनिश्चित करता है। सितंबर, 1990 ई० में इसके द्वारा न्यूयार्क में बच्चों और महिलाओं को अधिकारों की रक्षा के लिए 150 देशों के प्रतिनिधियों के समक्ष 27 लक्ष्यों का अनुमोदन किया गया।

संयुक्त राष्ट्र शरणार्थी उच्चायुक्त संस्था, मानवाधिकारों की रक्षा के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण कदम है। इसकी स्थापना 1951 ई० में की गई। इसका कार्य ऐसे विस्थापित लोगों को संरक्षण प्रदान करना है जो राजनीतिक अथवा सामाजिक कारणों से अपना देश छोड़ने पर मजबूर हो जाते हैं।

संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम 1956 ई० में स्थापित हुआ। संयुक्त राष्ट्र की सभी विशिष्ट एजेंसियाँ समस्त संसार में इसके द्वारा चलाये जाने वाले कार्यक्रमों में भाग लेती हैं। यह संस्था विश्व के करीब 175 विकासशील राष्ट्रों की सरकारों, गैरसरकारी संस्थाओं, तथा व्यक्तियों को सहयोग प्रदान करती है। भारत में इसके कार्यक्रमों के प्रमुख क्षेत्र हैं :- शिक्षा, कृषि, स्वास्थ्य, अनुसंधान सेवाओं की सहायता तथा निर्यात में बढ़ोतरी।

डिपार्टमेंट ऑफ ह्यूमैनिटैरियन अफेयर्स की स्थापना 1922 ई० में हुई। यह संस्था प्राकृतिक विपदाओं मसलन भूकंप, बाढ़, सूखा आदि से उत्पन्न मुसीबतों में मानवीय सहायताएँ उपलब्ध कराती है। यह संस्था आपातकाल के समय में पीड़ित राष्ट्रों को सहायता के रूप में पूँजी भी प्रदान करती है। साथ ही इसका प्रमुख कार्य मानवीय सहायता में संलग्न संयुक्त राष्ट्र एजेंसियों के प्रयासों को समन्वित करना है।

यूनाइटेड नेशन्स इंस्टीच्यूट फॉर डिसआर्मामेंट रिसर्च को 1980 ई० में निरस्त्रीकरण और सुरक्षा-संबद्ध समस्याओं विशेषतया अंतर्राष्ट्रीय सुरक्षा से संबंधित मुद्दों पर अंतर्राष्ट्रीय अनुसंधान करने के लिए स्वशासी संस्था के रूप में अनुमोदित किया गया। इसने निरस्त्रीकरण और शस्त्र-नियंत्रण के विभिन्न विषयों पर अपने कई लेख प्रकाशित किये हैं।

संयुक्त राष्ट्र ने अपनी स्थापना के बाद से ही मानवाधिकारों की रक्षा के लिए अपने प्रयास तेज कर लिये थे। 10 दिसंबर, 1948 ई० को संयुक्त राष्ट्र ने मानवाधिकारों का घोषणापत्र स्वीकार कर लिया। विश्व स्तर पर इसके द्वारा मानवाधिकारों की रक्षा के निमित्त अन्य प्रयास भी किये गये हैं। 16 दिसंबर, 1966 ई० को संयुक्त राष्ट्र महासभा ने दो संविदाओं को स्वीकृति प्रदान की जिनपर आज तक कई राष्ट्रों ने अपनी स्वीकृति की मुहर लगा दी है। ये दो संविदाएँ हैं:- आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक संविदा तथा नागरिक व राजनीतिक से संबंधित संविदा। नागरिक एवं राजनीतिक अधिकारों से संबंधित संविदा में एक वैकल्पिक संलेख को भी स्वीकार किया गया। इन तीनों संविदाओं को " अंतर्राष्ट्रीय मानव अधिकार " के रूप में जाना जाता है। प्रजातीय विभेद को समाप्त करने के उद्देश्य से दिसम्बर, 1965 ई० में एक अंतर्राष्ट्रीय समझौता हुआ। पुनः 1973 ई० में जाति, रंग-भेद के अपराध के दमन एवं दंड से संबंधित एक अंतर्राष्ट्रीय समझौता हुआ। इसी तरह के कई मानवाधिकार प्रस्ताव को यू० एन० ओ० ने स्वीकृत कर कार्यान्वित किया है। आशा है, नई शताब्दी में संयुक्त राष्ट्र विश्व मंच पर मानवाधिकारों के क्षेत्र में कई और महत्वपूर्ण कदम उठाएगा।

यू.एन.ओ. ने विश्व शांति को बनाए रखने में अपने 55 वर्षों का सराहनीय योगदान दिया है। यद्यपि उसे इस कार्य में अनेक बाधाओं का भी सामना करना पड़ा है तथापि 1945 ई० के द्वितीय विश्व युद्ध के समापन के बाद पुनः किसी तृतीय विश्व युद्ध का न होना इस बात का पुख्ता प्रमाण है कि संयुक्त राष्ट्र अपने विश्व-शांति उद्देश्य में सफल हुआ है। कई ऐसे मौके भी आए हैं, जो अपेक्षाकृत अधिक कठिन थे फिर भी इनका निराकरण बड़े ही अच्छे तरीके से यू.एन.ओ. ने किया। द. अफ्रीका देशों, मध्य-पूर्व के राष्ट्रों, द० पूर्वी एशियाई राष्ट्रों के गृह-कलह अंतर्देशीय-विवाद और सीमा-विवाद को समाप्त करने में इस विश्व संस्था ने कई सराहनीय कार्य किए हैं। उदाहरण के लिए सोमालिया में विगत वर्षों में हुए गृह युद्ध में विस्थापितों, बेघर देशवासियों को मानवीय सहायता और स्थायी शांति बनाए रखने के लिए सैन्य सहायताएं यू.एन.ओ. द्वारा चलाए जाने वाले विश्व शांति अभियान की प्रमुख सफलता है।

पूरे विश्व में स्थायी शांति बनाए रखने के लिए यह आवश्यक है कि विश्व में निरस्त्रीकरण के प्रयास तेज किए जाएं। संयुक्त राष्ट्र द्वारा इस हेतु कई प्रयास किए गये जिनमें सबसे प्रमुख 'अंतर्राष्ट्रीय शस्त्र नियंत्रण संधि' था। इसका एक महत्वपूर्ण कार्य परमाणु और रासायनिक हथियारों के खतरे का निबटारा था। इस दिशा में 1968 ई० में परमाणु अस्त्रविहीन राष्ट्रों का सम्मेलन जेनेवा में हुआ। संयुक्त राष्ट्र ने परमाणु हथियारों के खात्मे के लिए एक 'सम्पूर्ण परमाणु परीक्षण निषेध संधि (CTBT)' की घोषणा की है। 26 सितंबर, 1996 ई० तक इस पर अमेरिकी नेतृत्व में 80 राष्ट्रों ने अपने हस्ताक्षर कर दिये थे। परंतु इसका एक अदृश्य और अतिसंवेदनशील

पक्ष यह था कि यह संधि उन राष्ट्रों का पक्ष लेती है, जो परमाणु शक्ति संपन्न हैं। तात्पर्य यह कि जिनके पास परमाणु शक्ति नहीं है, हस्ताक्षर के बाद उन्हें यह स्वतंत्रता नहीं मिलेगी कि वे परमाणु परीक्षण करें और जिन राष्ट्रों के पास पहले से ही परमाणु अस्त्रों के जखीरें मौजूद हैं उन्हें खत्म करने की तो कहीं बात ही नहीं कही गई है। यही कारण है कि अब तक भारत ने इस संधि को स्वीकार नहीं किया है।

निश्चित रूप से संयुक्त राष्ट्र ने विश्व शांति के क्षेत्र में अपना अपूर्व योगदान दिया है तथापि विगत वर्षों में कुछ घटनाओं से यह संभावना व्यक्त की जाने लगी है कि भावी शताब्दी में संयुक्त राष्ट्र चंद विकसित, परमाणु शक्ति संपन्न राष्ट्रों के हाथों की कठपुतली बन जाएगा, क्योंकि इसका एक प्रमुख स्थायी देश महाशक्ति अमेरिका अपनी शक्ति से कुछ छोटे राष्ट्रों की संप्रभुता नष्ट करने पर तुला हुआ है। ये तो जिसकी लाठी उसकी भैंस वाली कहावत चरितार्थ करने की बात हुई और तब तो इस विश्व संस्था का औचित्य ही क्या रह जाता है? अभी हाल ही में अमेरिका और ब्रिटेन की संयुक्त सैन्य कार्रवाई और वह भी ईराक जैसे स्वतंत्र राष्ट्र पर, इसका एक ज्वलंत प्रमाण है। पर इस स्थिति में संयुक्त राष्ट्र द्वारा अमेरिका को न रोक पाना खेदजनक है, पर शायद इसलिए कि अमेरिका संयुक्त राष्ट्र को सर्वाधिक अनुदान प्रदान करता है। इस पर विश्व संस्था ने कुछ नहीं कहा।

फिर भी ऐसी परिस्थितियां आती हैं, जाती हैं, परंतु भविष्य में ऐसी घटनाओं की पुनरावृत्ति न हो, इसका ध्यान संयुक्त राष्ट्र को रखना होगा क्योंकि 'संयुक्त राष्ट्र संघ' से संपूर्ण मानव जाति को बहुत सारी आकांक्षाएं और आशाएं हैं। आशा है कि आने वाले समय में भी संयुक्त राष्ट्र अपनी अमूल्य सेवाएं इस विश्व को प्रदान करता रहेगा।

...

यदि तुम्हारा हृदय पवित्र है तो तुम्हारा आचरण भी सुन्दर होगा; यदि तुम्हारा आचरण सुन्दर है तो तुम्हारे घर में शान्ति रहेगी; यदि घर में शान्ति है तो राष्ट्र में सुव्यवस्था रहेगी और यदि राष्ट्र में सुव्यवस्था है तो समस्त विश्व में शान्ति और सुख रहेगा।

- कन्फ्यूशस

जिंदगी

श्री अरूण कुमार पाठक
लिपिक

ऐ जिन्दगी ! तुम मुझे कहाँ ले आई,
क्या दुनिया की सारी बददुआ मुझमें ही समाई ?
ऐ जिन्दगी, अगर पसन्द नहीं तुझे मेरी जिन्दगी
तो मेरी जिन्दगी ले ले,
मगर इतना न तड़पा कि मैं कहर कर रह जाऊँ
और किसी से कुछ कह न पाऊँ !

ऐ जिन्दगी ! तुम मुझे कहाँ ले आई,
ऐ जिन्दगी, अगर तुझे देनी थी जिन्दगी
तो जिन्दादिली क्यों न दी ?

दुनिया से लड़ने की ताकत क्यों न दी ?

ऐ जिन्दगी, मत कर मुझसे कुड़माई

ऐ जिन्दगी ! तुम मुझे कहाँ ले आई,

क्या दुनिया की सारी बददुआ मुझमें ही समाई ?

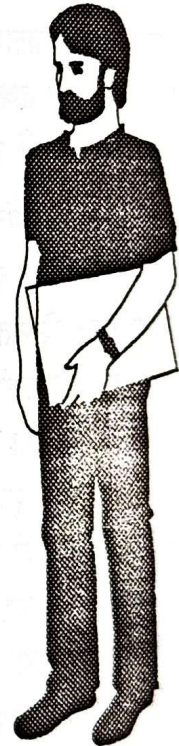
ऐ जिन्दगी, जिन्दगी क्या है एक जिन्दगी का झमेला है ।

लेकिन, जिन्दगी इस जिन्दगी में तुमने छोड़ा मुझे अकेला है ।

ऐ जिन्दगी, तुम मुझसे इतना क्यों है घबराई

ये जिन्दगी तुम मुझे कहाँ ले आई ।

क्या दुनियां कि सारी बददुआ मुझमें ही समाई ?



झूठी शान

श्री हरेराम प्रधान
वरिष्ठ लेखाकार

सन् 1983 की घटना है। बसन्त पंचमी यानी सरस्वती-पूजा के दूसरे दिन मैं कार्यालय से शाम के समय सी.जी.एच.एस. बुद्ध मार्ग दवाखाना में दवा लेने जा रहा था। अस्पताल से थोड़ी दूर उत्तर की तरफ ही था एक-तीन-चार साल की बच्ची रोड पर रोती चिल्लती दौड़ती आ रही थी। शाम के समय रोड पर वैसे ही काफी भीड़ रहती है और उस दिन माँ सरस्वती की मूर्ति का विसर्जन करने की वजह से भीड़ और अधिक बढ़ गई थी। वह बच्ची एक गाड़ी के नीचे आते-आते बची। मैंने तत्काल जाकर उसे उठाया और पूछा कि किधर जाओगी। उसने हाथ के इशारे से आगे की ओर बताया। मैं उसे गोद में लेकर आगे बढ़ने लगा। आगे जाने पर उसने और आगे की ओर इशारा किया। मैं समझ गया कि मूर्ति विसर्जन में यह लड़की अपने साथियों से बिछड़ गई है।

अब मैंने अस्पताल जाने का इरादा छोड़ दिया और उसे रिक्षा पर बैठाकर उत्तर की तरफ जाने लगा। वह लड़की जैसे ही किसी मूर्ति विसर्जन वाले दल को देखती तो उसमें किसी के पहचानने की कोशिश करती और फिर रोने लगती। इस तरह मैं उसे रिक्षा पर बैठाकर बाँसघाट से जी.पी.ओ. गोलम्बर तक दो-तीन बार आया और गया, पर उसे उसका साथी नहीं मिला। पूछने पर अपना नाम तथा पता भी नहीं बता पाती थी। सिर्फ हाथ के इशारे से घर का पता बताती थी। ऐसी हालत में मैं उसे कहाँ ले जाता ?

अन्त में हारकर मैं उसे लोदीपुर अपने घर में लाया। (उस समय मैं लोदीपुर में ही रहता था) घर में बच्ची को देखकर सब आश्चर्य चकित हो गये, परन्तु जैसे ही मैंने सारी घटना सुनाई तो लोग वस्तु स्थिति को समझ गये। रात के करीब आठ बज गये थे। लड़की हमारे बच्चों के साथ मिलकर खेलने लगी और अन्त में खाना खाकर सो गई; परन्तु हमारी आँखों में अभी भी पीड़ा थी। इस बात को लेकर कि लड़की किसकी है और उसके माँ-बाप को उसे कैसे पहुँचाया जाय। इसी उधेड़-बुन में था कि हमारे ऊपर वाली मंजिल में श्री सुदामा सिंह रहते थे। वे अपने कार्यालय से घर देरे से आते थे। श्री सुदामा सिंह हरियाना ट्रान्सपोर्ट में मैनेजर थे। अक्सरहाँ आठ-नौ बजे के बाद ही वे घर आते थे। मैंने उनको सब बातें बताई। सिंह साहब बुजुर्ग थे। स्थिति को भांप गये और बोले कि 'बबुआ' यह शहर है, देहात नहीं है। आप तो लड़की की जान बचाकर उसे अपने घर ले आये; पर उसके घर वाले या अन्य लोग कहेंगे कि लड़की को

भागकर लाये हैं। अतः थाने में जाकर एफ.आई.आर. लिखा दीजिये। सिंह साहब का कहना था कि मेरे कान खड़े हो गये। तत्काल एक दोस्त को लेकर मैं कोतवाली थाना गया और सारी बातों का खुलासा करते हुए लड़की का हुलिया बताया और एफ.आई.आर. दर्ज करने हेतु अनुरोध किया। तबतक एक नवयुवक भी जिसे मैं पहचानता नहीं था, वहाँ आया और लड़की का हुलिया सुनकर उसने कहा कि थानेदार साहब वह लड़की हमारी भतीजी ही होगी, जो तीन बजे से स्कूल की छुट्टी होने पर भी अभी घर नहीं गई है। उसे हम लोग उसी वक्त से खोज रहे हैं। थानेदार साहब हमसे बोले कि लड़की को जाकर देखा दीजिये और यदि लड़की वही है तो इन्हें दे दीजियेगा। मैंने थानेदार साहब से कहा कि यदि लड़की इनको पहचान जायेगी तो मैं अवश्य उन्हें दे दूँगा। एफ.आई.आर. दर्ज नहीं हुआ। मैं उस नवयुवक को साथ लेकर अपने घर आया। लड़की सोई हुई थी, उसे उठाया गया। लड़की उस नवयुवक को देखकर चाचा कहकर उससे लिपट गई। मुझे समझते देर नहीं लगी कि लड़की वास्तव में इस नवयुवक की भतीजी ही है। ठंड का समय था, परन्तु लड़की के बदन पर एक हाफ स्वेटर भी नहीं था, मेरी पत्नी ने एक हाफ स्वेटर लड़की को पहना दिया था; क्योंकि उसी के बराबर मेरी भी लड़की थी। अतः, स्वेटर घर में था उसी के नाप का।

जैसे ही लड़की अपने चाचा के साथ जाने को तैयार हुई, उसी वक्त एक आदमी आया और उस लड़की को डाँटने लगा कि जाड़े के समय में एक स्वेटर तक नहीं पहनी हो। उसकी डांट सुनकर वह लड़की सहम गई और पुनः रोने लगी। परन्तु उस आदमी को उस पर तरस नहीं आई। यह देखकर मुझे काफी दुःख हुआ और मैं उस आदमी से पूछने वाला ही था कि आप कौन सज्जन हैं, जो इस तरह से पेश आ रहे हैं, उसके पहले ही उसका भाई बोला कि लड़की के पापा हैं। वह आदमी देखने से रोबिला एवं घमंडी स्वभाव का था, लड़की को वैसे कपड़े में देखकर अपनी तौहिनी समझा, वह यह भी देखा कि उसकी लड़की को दूसरे लोग जाड़ा समझकर अपने घर से स्वेटर पहना दिये हैं, इसीलिये लड़की को डाँटने में लगा था। मैंने उस व्यक्ति को कहा कि थाने में लिखाकर इसे आप अपने घर ले जाइये। उस पर वह व्यक्ति बोला कि थाने जाने की क्या जरूरत है, मैं खुद आई.जी. साहब का रीडर हूँ। 'रीडर' साहब से ज्यादा बात करना मैंने मुनासिब नहीं समझा। मैंने सिर्फ इतना कहा कि रास्ते में कोतवाली है, खबर कर दीजियेगा कि लड़की को हम अपने साथ लेकर जा रहे हैं। जाते वक्त उस आदमी ने एक शब्द भी सहानुभूति का नहीं कहा और न धन्यवाद ही दिया। यह देखकर मुझे अफसोस हुआ कि दुनिया में ऐसे भी लोग हैं, जिनको अपनी 'झूठी शान' के आगे और कुछ भी दिखाई नहीं देता है। खैर लड़की सही जगह पर चली गई, यह जानकर काफी खुशी हुई। किसी ने सच ही कहा है कि 'नेकी कर दरिया में डाल।'

माँ की पुकार

श्री राजवल्लभ प्रधान
लिपिक

शोक में रोए सिया
जब राम वन जाने लगे ।
सूख गई डाली की कलियाँ
फूल भी मुरझाने लगे ।
जब माँ की हुई पुकार
तब धारण करना पड़ा राम अवतार ।
सुनो हे भारत की सन्तान
कान खोल अब सुनो पुकार ।
आज कारगिल में
जल रही है हिंसा की आग ।
अब रावण का करना है संहार
उसने छोड़ दिया है अपना संस्कार ।
ऐ वीरों अब धरो रामावतार
तब उसका होगा संहार ।
सब कुछ होने पर भी
नहीं मान रहे हैं अपनी हार ।
यह धरती है अमर वीर की
कुर्बान हुए बाबू कुंअर वीर ।
ऐ वीरों अब धरो रामावतार
तब कारगिल की होगी छुटकार ।

...



'हिन्दी पखवाड़ा समारोह' के अवसर पर श्री अरुण कुमार सिंह, महालेखाकार (ले० एवं हक०)-II, बिहार, पटना अपने विचार व्यक्त करते हुए।



श्री खालिद बिन जमाल, उप महालेखाकार (प्रशा०)-II, बिहार, पटना हिन्दी पखवाड़ा समारोह के समापन पर धन्यवाद ज्ञापन करते हुए।



'चेतना' पत्रिका के एकादश अंक का विमोचन करते हुए अखिल भारतीय प्रशासनिक सेवा के भूतपूर्व अधिकारी एवं लब्ध साहित्यकार श्री राम उपदेश सिंह साथ में हैं बायें से खड़े हैं श्री अरुण कुमार सिंह, महालेखाकार (ले० एवं हक०)-II, बिहार, पटना



महालेखाकार (ले० एवं हक०)-॥, बिहार, पटना के कार्यालय को राजभाषा हिन्दी में वर्ष 1998-99 के लिए हिन्दी में सर्वोत्तम कार्य करने हेतु प्रथम पुरस्कार स्वरूप गुवाहटी सम्मेलन में प्रदत्त शील्ड को महालेखाकार (ले० एवं हक०)-॥, बिहार को सौंपते हुए उप महालेखाकार (प्रशासन) साथ में खड़े हैं श्री ललन प्रसाद श्रीवास्तव, हिन्दी अधिकारी ।



'हिन्दी पखवाड़ा समारोह' के समापन के उपरान्त विचार विमर्श करते हुए श्री नन्द लाल महालेखाकार (ले० प्र०)-१, बिहार, पटना एवं श्री अरुण कुमार सिंह, महालेखाकार (ले० एवं हक०)-॥, बिहार, पटना ।